पुस्तक के सम्बन्ध मे

यहां आयुर्वेद विद्यालय के द्वारा प्रतिवर्ष आयुर्वेद विशारद की परीक्षा दिलाई जाती है। उसमें अन्यान्य विषयों पर तो उपयुक्त पुस्तकें हैं पर ऊर्ध्वाङ्ग चिकित्सा पर संक्षिप्त एवं सरल प्रारम्भिक शिक्षा के योग्य जिसमें मानसिक रोगों पर भी प्रकाश डाला गया हो ऐसी कोई पुस्तक देखने में नहीं आ रही है। अतः इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए श्री नवजीवन औषधालय उसकी रसायनशाला और आयुर्वेद विद्यालय के प्रधान वैद्य श्री पं० लेखराम जी शर्मा शास्त्री आयुर्वेदाचार्य ने यह पुस्तक लिखी है आशा है कि छात्रों के उपयोग में आयेगी।

१-१-२००५

केशवानन्द

दो शब्द

असित गिरि समं स्यात् कज्जलं सिन्धु पात्रे ।
सुर तरु वरशाखा लेखनी पत्र मुर्वीम् ॥
लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्व कालं ।
तदपि तव गुणाना मीशपारन्नयाति ॥

ईश्वर की कृपा से पञ्जाब तथा राजपूताना प्रान्त में हिन्दी भाषा के प्रचारक एवं हिन्दी में आयुर्वेद के (अध्यापक ही वैद्य प्रणाली से) प्रवल इच्छुक श्रीस्वामी केशवानन्द जी महाराज द्वारा संचालित जाट विद्यालय संगरिया बीकानेर के अन्तर्गत आयुर्वेद विद्यालय में हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग के वैद्य-विशारद एवं आयुर्वेद रत्नके छात्रों को पढाने का सन् १६४२ ई० से मुझे अवसर मिला है तभी से ऊर्ध्वाङ्ग चिकित्सा के प्रश्न पत्र में विद्यार्थियों को वहुत से इधर उधर के ग्रन्थ जुटाने पड़ते थे परन्तु हिन्दी में आयुर्वेद के ग्रन्थ भाव प्रकाश आदि अधिक मूल्यवान् होने से वहुत से असमर्थ छात्र उन पुस्तकों को न खरीदने के कारन केवल विषय को कोपियों में नोट करके ही अपना कार्य चलाते रहे हैं । श्री शुक्ल जी द्वारा लिखित इस विषय की पुस्तक वहुतविस्तृत और कई भागों में विभक्तहोने के

कारण वैद्य विशारद के छात्रों के लिए समझ से दूर की वस्तु है, अतः इन्हीं विद्यार्थियों के कष्ट को देख कर हृदय में यह भाव पैदा हुआ कि इस विषय की एक साधारण संक्षिप्त पुस्तक लिखी जावे जिस से परीक्षार्थी छात्रों का कष्ट दूर हो, यह भाव श्री स्वामी जी के सामने भी रक्खा उन्हों ने भी आवश्यक समझ कर मुझे पुस्तक तैयार करने की सन्मति दी इस पुस्तक में संक्षिप्त, मुख, कान, नासिका, नेत्र तथा शिर के रोगों की संख्या नाम निदान लक्षण तथा चिकित्सा आदि के वर्णन के साथ २ मस्तिष्क तथा वात नाड़ियों से सम्बन्ध रखने वाले उन्माद, अपस्मार, मदात्यय, सन्यास, मूर्च्छा, पक्षाघात आदि रोगों का भी यथा योग्य चिकित्सा सहित वर्णन किया गया है। इसी प्रकार नपुंसकता के लक्षण भेद के साथ २ उसको मिटाने वाले रसायन तथा वाजीकरण का भी दिग्दर्शन करायागया है।

साथ में छात्रों के सुभीता के लिए छः वर्ष के प्रश्न-पत्र भी देदिए गए हैं, यदि इस पुस्तक से जनता एवं छात्रों का कुछ भी उपकार होगा तो मैं मेरा परिश्रम सफल समझूंगा।

विनीत

लेखक—

अक्षय तृतीया २००४

विषय सूची

१ प्रथम अध्याय में पृष्ठ १—से २० तक मुखरोग तथा चिकित्सा का वर्णन है।

२ द्वितीय अध्याय में पृष्ठ २१—से २८ तक नाशा रोग तथा चिकित्सा का वर्णन है।

३ तृतीय अध्याय में पृष्ठ २६—से ३६ तक कर्ण रोग विज्ञान तथा चिकित्सा का वर्णन है।

४ चतुर्थ अध्याय में पृष्ठ ४०—से ६८ तक नेत्र रोग विज्ञान तथा चिकित्सा का वर्णन है।

५ पञ्चम अध्याय—में पृष्ठ ६६ से ७८ तक शिरो रोग विज्ञान तथा चिकित्सा का वर्णन है।

६ षष्टमा अध्याय में पृष्ठ ७६—से ११० तक योपपस्मार आर्दित उन्माद, अपस्मार, मूर्च्छा, सन्यास, पक्षाघात मदात्यय आदि रोगों केलक्षण तथा चिकित्सा का वर्णन है।

७ सप्तमाध्याय में पृष्ठ १११ से ११६ तक नपुंसकता के कारण लक्षण भेद तथा रसायन वाजीकरण का वर्णन है।

८ पृष्ठ १२० से १२७ पृष्ठ तक परीक्षा प्रश्न पत्र।



|| श्री गणेशायनमः ||



* प्रथम–अध्याय *

मुख रोग निदान—

जलचर जन्तुओं का मांस, दूध, दही, मच्छसी, के अधिक सेवन से कफ प्रधान दोष कुपित होकर मुंह के भीतर रोग पैदा कर देते हैं। मुख रोगों की संख्या ६५ हैं। जैसे—दान्तों में ८ ओष्ट में ८ दन्त मूल में १५ तालु में ९ जीभ में ५ कण्ठ में १७ तथा शेष मुंह के भाग में ३ हैं।

ओष्ट में होने वाले ८ रोगों की व्याख्या।

वातज ओष्ट रोग के लक्षण—वायु के कोप से ओष्ट खरखरे, रूखे और कड़े हो जाते हैं और फट भी जाते हैं।

पैतिक ओष्ट रोग के लक्षण—पित्त से ओष्ट में छोटी छोटी फुन्सियां होकर पक जाती हैं, उनमें जलन होती हैं तथा होठ का रङ्ग पीला हो जाता है।

कफज ओष्ट रोग के लक्षण—इसमें त्वचा के वर्ण की फुन्सियां होती हैं, उनमें पीड़ा कम होती है, होठ भारी होजाता है और गीला रहता है।

त्रिदोषज के लक्षण—इसमें काली, पीली, लाल और सफेद अनेक वर्ण की फुन्सियां होती हैं, जिनमें वातादि दोषों के लक्षण मिलते हैं।

रक्तज ओष्ठ रोग के लक्षण—इसमें खजूर के रङ्ग के समान फुन्सियां निकलती हैं, और वे लाल होती हैं। तथा इनसे खून निकलता है।

मांसज ओष्ठ रोग के लक्षण—इसमें ओंठ मोटे भारी होजाते हैं, और ओंठ के दोनों तरफ कीड़े दिखाई पड़ते हैं।

मेदोज ओष्ट रोग के लक्षण—इसमें ओठों पर खुजली चलती है, तथा घी के समान चिकनी पपड़ी जम जाती है। और सफेद पीप बहता रहता है। व्रण मुलायम भी नहीं होते और भरते भी नहीं हैं।

अभिघातज ओष्ट रोग के लक्षण—चोट लगने से ओठ कट जाते हैं लाल एवं गठीले होजाते हैं। तथा उनमें खुजली चलती है।

—o—

दान्तों की जड़ में होने वाले १५ रोगों का विवरण

१-शीताद के लक्षण—कफ और रक्त के बिगड़ने से मसूढ़ों से बिना चोट के अकस्मात खून बहने लगता है, बदबू आती है, तथा वे काले एवं मुलायम पड़ जाते हैं। और आगे से आगे रोग बढ़ कर मसूढ़े गल कर गिर जावें, उसे शीताद कहते हैं।

२-दन्तपुप्पट के लक्षण—कफ और रक्त के दोष से दो या तीन दान्तों में सूजन हो जावे उसे दन्तपुप्पुट कहते हैं।

३-दन्त वेष्ट (पायरिया) के लक्षण—रक्त के बिगड़ने से दान्त हिलने लगें तथा मसूड़ों से पीव एवं खून बहे और बदबू आवे उसे दन्तवेष्ट कहते हैं।

४-शौषिर के लक्षण—(गप बाइल) कफ और रक्त के कोप से मसूढ़ों में लाल रङ्ग की सूजन हो और उसमें पीड़ा हो तथा लार बहे उसे शौषिर कहते हैं।

५-महाशौषिर के लक्षण—सन्निपात के कोप से दांत हिलने लगें दान्त, तालु तथा ओठ फट जावें तो उसे महा शौषिर कहते हैं।

६-परिदर के लक्षण—जिसमें मसूढ़े गलें और फटें तथा थूक के साथ खून बहे उसे परिदर कहते हैं।

७-उपकुश के लक्षण—मसूढ़ों में पाक और जलन होने से दांत हिलने लगें तथा बदबू युक्त रक्त आवे तथा साधारण दर्द हो और मसूढ़े फूल जावें उसे उपकुश कहते हैं।

८-वैदर्भ के लक्षण—मसूढ़ों में चोट या दान्तुन की रगड़ से सूजन होकर पक जावे उसमें दर्द एवं जलन हो तथा दांत हिलने लगें उसे वैदर्भ रोग कहते हैं।

९-खली वर्द्धन के लक्षण—(एक्स्ट्राटूथ) वायु की अधिकता से दान्त पर दान्त पैदा होता है उस समय बड़ी पीड़ा होती है, और दान्त जब पूरा निकल आता है तब पीड़ा अपने आप शान्त होजाती है, उसे खलीवर्द्धन रोग कहते हैं।

१०-कराल के लक्षण—अपने कारणों से कुपित हुआ वायु दांतों को टेढ़ा तथा नोकीला बना देता है, उसे कराल रोग कहते हैं, और यह असाध्य है।

११-अधिमांस के लक्षण—जबड़े के अन्तिम भाग में भारी सूजन होजाती है, तथा उसमें दर्द होता है और लार गिरती है, उसे अधिमांस कहते हैं, और कफ के कोप से होता है।

१२-दन्तनाड़ी के लक्षण—दांतों की जड़ में एक सुराक हो जाता है और उससे पीक या रक्त निकलता है इसमें तीनों ही दोषों का समावेश होता है, उसे दन्तनाड़ी कहते हैं।

१३-दालनाख्य दन्तरोग के लक्षण—वायु के कोप से दांतों में चीरने जैसी पीड़ा हो उसे दालनाख्य रोग कहते हैं।

१४-क्रिमिदन्त के लक्षण—(करीज आफ टूथ) खून की खराबी से कीड़े पड़ने से मसूढ़ों में सूजन तथा जलन होती है, तथा पक कर भयङ्कर दर्द हो दांतों में छिद्र हो जावे उसे क्रिमिदन्त कहते हैं। इसमें वात का कोप होता है।

१५-भञ्जनक के लक्षण—कफ वात के कोप से दान्त टूट कर गिर जावें तथा मुख टेढा होजावे उसे भञ्जनक कहते हैं।

१६-दन्तहर्ष के लक्षण(इरिटेशन इन दी टूथ) वात पित्त के कोप से दांतों में ठंडक, हवा और खटाई के लगने से विशेष तकलीफ (दांतों का आमना) हो उसे दन्तहर्ष कहते हैं।

१७-दन्त शर्करा के लक्षण—(टारटर) दांतों में लगे हुए मल का पित्त और वायु शोषकर शकर का रूप बना देते हैं, उसे दन्त शर्करा कहते हैं।

१८-कपालिका के लक्षण—दन्त शर्करा पपड़ी के रूप में दांतों से उतर २ कर गिरे उसे कपालिका कहते हैं। इसमें दांत का हिस्सा भी टूट २ कर गिरता है और अन्त में दांत का नाश होजाता है।

१९-श्यावदन्त के लक्षण—(ब्लेकने कोल्ड टूथ) खून और पित्त के कोप से जल कर दांत काला या नीला हो जावे उसे श्यावदन्त कहते हैं।

२०-दन्तविद्रधि के लक्षण—रक्त सन्निपात के कोप से दांतों के मसूढों में बाहर भीतर सूजन होकर पक जावें, उसमें जलन तथा पीड़ा हो और खून तथा पीप बहे उसे दन्त विद्रधि कहते हैं।

❀ जिह्वा रोगों के लक्षण ❀

१-वायु के कोप से—जीभ फट जाती है तथा गाजवान के पत्तों के समान खरदरी होजाती है एवं रसों का स्वाद ठीक प्रतीत नहीं होता है।

२-पित्त के कोप से—जीभ में जलन होती है लम्बे २ लाल २ कांटे पैदा होजाते हैं।

३-कफ के कोप से—जीभ भारी, मोटी होजाती है और उसके चारों ओर सेमा के कांटों की तरह मस्से उभर आते हैं।

४-अलास रोग—(सब्लिग्वल एब्सेस) जीभ के नीचे एक मोटी कड़ी सूजन होती है इसके बढ़ने पर बोलना, खाना, पीना, जीभ का स्वाद आदि बंध होजाता है, और जीभ की जड़ पक जाती है, यह कफ और रक्त के कोप से होता हैं।

५-उपजिह्वा के लक्षण—(रेन्युला) जीभ के नीचे अगले भाग में समान कफ और रक्त के कोप से एक सूजन हो जाती है, जिससे जीभ ऊंची होजाती है एवं सुई चुभने जैसी पीड़ा होती है उसे उपजिह्वा रोग कहते हैं।

६-कण्ठशुण्डी के लक्षण—(एलोंगेटेड युव्युला) गलसुवा-कफ और रक्त के कोप से तालु की जड़ में एक लम्बी सूजन हो जाती है, जो हवा भरे फूटबाल के समान होती है। इससे कास श्वास और प्यास रोग हो जाता है इसको हिन्दी में गलसुवा भी कहते हैं।

७-तुण्डीकेरी के लक्षण—तालु में एक बड़ी सूजन होती है वह पक जाती है तथा उसमें जलन कोंच होता है, यह भी खून और कफ की खराबी से होती है।

८-अध्रुप के लक्षण—तालु में एक मुलायम लाल सूजन होती है उसमें तीव्र पीड़ा एवं ज्वर हो जाता है, यह रक्त की खराबी से होता है।

९-कच्छप के लक्षण—तालु के अन्दर कच्छुवे की पीठ के समान कम पीड़ा वाली एक सूजन होती है और धीरे २ बढ़ती है, उसे कच्छप कहते हैं।

१०-तालव्बार्बुद के लक्षण—(पेलेटेल केन्सर) तालु के मध्य में कमल के केशर के समान लम्बे २ मांस के अङ्कुरों से

युक्त एक सूजन होती है, उसे ताल्वार्बुद कहते हैं, यह रक्त के कोप से होता है। कफ के कोप से तालु में मांस इकट्ठा होजाता है इसमें पीड़ा नहीं होती है, यह मांस संघात कहलाता है।

११-तालु पुप्पुटके लक्षण—तालु में मेद और कफ से एक कढ़ी बेर के समान पीड़ा रहित गांठ हो जाती है, उसे तालु पुप्पुट कहते हैं।

१२-तालुशोष के लक्षण—वायु के कोप से तालु सूखता है, बड़ी तेजी से श्वास चलता है, उसे तालु शोष कहते हैं।

१३-तालुपाक के लक्षण—पित्त के कोप से तालु पक जाता है, उसे तालु पाक कहते हैं, यह बड़ा ही भयानक रोग है।

१४-रोहिणी के सामान्य लक्षण—वात पित्त कफ के कोप से मांस तथा रक्त के खराब होने से गला में मांसाङ्कुर हो जाते हैं जो कि प्राण नाश करने वाले होते हैं, इसे रोहिणी कहते हैं।

१५-वातज रोहिणी के लक्षण—जीभ के चारों तरफ मांस के अंकुर होजाते हैं जिनमें बड़ी पीड़ा होती है और गले को रोक लेते हैं, तथा वात सम्बन्धी उपद्रव होते हैं।

१६-पित्तज रोहिणी के लक्षण—यह जल्दी ही पकती है तथा इसमें जलन एवं तीव्र ज्वर हो जाता है।

१७-कफज रोहिणी के लक्षण—यह गले को रोक लेती है, स्थिर होती है तथा धीरे २ पकती है।

१८-सन्निपातज रोहिणी के लक्षण—यह रोहिणी नीचे गहराई तक रहती है तथा तीनों दोषों के लक्षण होते हैं, यह असाध्य है।

१९-रक्तज रोहिणी के लक्षण—जो रोहिणी पीड़िकाओं से व्याप्त हो तथा पित्तज रोहिणी के लक्षण मिलते हों उसे रक्तज जानना।

२०-कण्ठ शालूक के लक्षण—कफ के कोप से गले में बेर के समान स्थिर कड़ी कांटों से युक्त गांठ पैदा हो जावे उसे कण्ठ शालूक कहते हैं और यह शस्त्र चिकित्सा साध्य है।

२०-अधि जिह्वक रोग के लक्षण—कफ और रक्त के कोप से जीभ के ऊपर जीभ की फूग (अग्रभाग) की तरह एक सूजन हो जाती है यह पकने पर ठीक नहीं होती।

२२-वलय रोग के लक्षण—कफ के कोप से गले में सूजन हो जाता है जिससे भोजन का मार्ग रुक जाता है। यह असाध्य है कोई भाग्य वाला ही शस्त्र चिकित्सा से ठीक होता है।

२३-वलाश के लक्षण—वात और कफ के कोप से गले में सूजन होती है। जिस से दम फूलता है और मर्म छेदन

जैसी तीव्र पीड़ा होती है अच्छे चिकित्सक इसे कष्ट साध्य समझते हैं।

२४-एक वृन्द के लक्षण—गले में एक गोल सूजन होती है उसमें जलन खुजली होती है। तथा कम पकती है और भारी प्रतीत होती है। इसे एक वृन्द कहते हैं।

२५-वृन्द के लक्षण—पित्त और रुधिर के कोप से गले में एक ऊन्ची सूजन होती है जिसमें बड़ी जलन तथा तेज ज्वर होता है।

२६-शतघ्नी के लक्षण—तीनों दोषों से गले के अन्दर एक गांठ लम्बी वत्ती के आकार में होजाती है, जिसके चारों और अंकुर मांस के बन जाते हैं, जिससे जलन पीड़ा होती है, तथा गला रुक जाता है जिस प्रकार तोप के सामने तोप के गोले से आदमी बच नहीं सकता इसी प्रकार इससे भी नही बचता, अतः चिकित्सक लोग इसे शतघ्नी कहते हैं।

२७-गलायु रोग के लक्षण—गले में आंवले की गुठली के समान कड़ी सूजन होजाती है जिससे भयङ्कर पीड़ा होती है, मानों भोजन का ग्रास गले में अटक गया हो। यह कफ और रक्त से होता है तथा बिना चीरा के ठीक नहीं होता।

२८-गलविद्रधि के लक्षण—गल में एक प्रकार की सूजन होती है, जिसमें तीनों दोषों के लक्षण होते हैं तथा यह त्रिदोषज विद्रधि के समान लक्षणों वाली होती है।

२९-गलौध के लक्षण—कफ और रक्त के कोप से गल में एक बड़ी सूजन होजाती है जिससे अन्न तथा श्वास मार्ग रुक जाते हैं, तीव्र ज्वर होता है यह भी भयङ्कर रोग है।

३०-स्वरघ्न के लक्षण—बढ़ा हुआ वायु श्वास मार्ग को रोक लेता है,जिससे कफ बोलने लगता है, तथा मूर्च्छा आ जाती है, श्वास फूलता है, गला सूखता है और स्वर भेद होजाता है, गले से कुछ भी निगला नहीं जाता इसे स्वरघ्न कहते हैं।

३१-मांस तान के लक्षण—गले में एक फैली हुई सूजन होती है जो फैल कर गले को रोक लेती हैं तथा तीव्र पीड़ा करती हैं और लटकती रहती है इसे मांस तान कहते हैं, यह तीनों दोषों से होती है एवं प्राण नाशक है।

३२-बिदारी रोग के लक्षण—गले में जलन युक्त लाल सूजन होती है जिससे वहां का मांस बदबूदार सड़ जाता है, यह रोग अधिकतर जिस करवट मनुष्य सोता है उसी तरफ होता है, और पित्त के कोप से माना गया है।

२३-वातिक सर्वसर रोग के लक्षण—(स्टाम ट्रीसा) जिसके सम्पूर्ण मुंह में फुन्सियां जलन युक्त हों और पीड़ा होती हो तो उसे वात से सर्वसर मुख रोग कहते हैं।

२४-पैत्तिक सर्वसर रोग के लक्षण—मुंह भर में लाल एवं पीली जलन युक्त फुन्सियां होजाती हैं।

२५-कफज सर्वसर रोग के लक्षण—इसमें सफेद रङ्ग की खुजलीदार फुन्सियां होती हैं और उनमें पीड़ा नहीं होती हैं।

असाध्य मुख रोगों की संख्या—

ओष्ठ रोगोंमें मांसज रक्तज और त्रिदोषज तीन असाध्य हैं दन्तमूलमें त्रिदोषज, नाड़ी और शोषिर असाध्य हैं। दन्तरोगमें—दालन, श्यावदन्त, और भञ्जनक असाध्य हैं जिह्वा रोगों में वलाश असाध्य है। तालु रोग में अर्बुद असाध्य है। गल रोग में स्वरघ्न, वलय, वृन्द, वलाश, विदारिका गलौघ, मांसतान, शतघ्नी और रोहिणी में उन्नीस रोग असाध्य हैं। इनको भी असाध्य कह कर छोड़ना नहीं चाहिए। परन्तु पहिले रोगी के अभिभावकों को असाध्यता प्रकट करके चिकित्सा करे शायद बच जावे। कारण कि कभी २ देखा गया है कि अरिष्ट और असाध्य लक्षण होने परभी भाग्य से रोगी बच जाता है। अतः चिकित्सा सर्वा वस्था में करनी उपयुक्त है।

* होठ के रोगों की चिकित्सा *

मुंह और मसूढ़ों के रोग और होठ के रोगों में कफ और रक्त की प्रधानता होती है अतः वारम्वार खून निकलवाना चाहिए।

१-वातज ओष्ठ रोगमें—गर्म स्नेह सेक, लेप, घी पीना, तेल मालिस आदि उपचार हितकर हैं वात नाशक औषधियों से तैल पका कर नस्य स्वेद मालिश आदि इस रोग में हितकर है।

२-पित्तज ओष्ठ रोग में-शिरावेध, उल्टी जुलाब देना निक्त निम्बादि का सेवन कराना। ठंडे लेप और सेचन हितकर हैं।

३-रक्तज ओष्ठ रोग में—जोंक लगाना और पित्त विद्रधि के समान इलाज करना चाहिए।

४-कफज ओष्ठ रोग में—खून निकलवाने के बाद शिर साफ करने वाला नस्य देना चाहिए। कवल धूपपान और स्वेदन कराना चाहिए

५-मेद जन्य ओष्ठ रोग में—स्वेद शोधन और अग्निका सन्ताप करना चाहिए। दूषित मांस निकलवा कर लेप करना चाहिए।

६-क्षतज ओष्ठ रोग में—होठ में घाव होने पर दबाकर स्वेद करना चाहिए। और सौ वार का धोया हुवा घी लगाना चाहिए।

७-वातज ओष्ठ रोग में—मोम, गुड़ और राल इनको समान भाग लेकर तैल या घी में पकाओ इसको लगानेसे वातज ओष्ट रोग ठीक हो जाता है।

८-पित्तज ओष्ठ रोग में—ठण्डी चीजों का लेप करना चाहिए।

९-कफज ओष्ठ रोग में—सोंठ, मिर्च, पीपल और जवाखार को समान भाग लेकर शहद में लगाने से आराम हो जाता है।

१०-मेदज ओष्ठ रोग में—त्रिफला (हरड़ बहेड़ा आंवला समान भाग) का चूर्ण शहद में मिला कर लेप करना चाहिए।

११-त्रिदोषज ओष्ठ रोग में—जिस दोष की अधिकता हो उसी दोष का इलाज करना चाहिए।

नोट—पानी में सोवार धोए हुए लोनी घी में कपूर मिलाकर लेप करने से सब प्रकार के ओष्ठ रोग शांत हो जाते हैं।

* दन्त रक्षा विधि *

यदि अपने दांतों को सुरक्षित निर्दोष और सुदृढ़ रखना चाहते हों उनको निम्न लिखित बातों पर ध्यान देना चाहिए।

प्रातः काल प्रतिदिन नीम या कीकर का दांतुन अथवा कोई मञ्जन एवं कड़वे तैल में सैंधा नमक मिला कर दांत मलो और कुल्ले करो।

खड़िया या कोयलोंके चूर्णसे दांतोंको मलो या कपड़े से साफ करो वालु या नमक से दांत साफ करना भी लाभदायक है। भोजन के बाद दांतों को साफ करो। ठण्डे भोजन के बाद गर्म एवं गर्म वस्तु के बाद ठण्डी वस्तु का सेवन न करो। इस प्रकार करने से दांत ठीक रहते हैं।

दन्त रोग चिकित्सा—

१-शीताद की चिकित्सा—सौंठ, सरसों, हरड़ बड़ी, बहेड़ा, आंवला इनके काढ़े से कुल्ला करने से शीताद ठीक हो जाता है।

२-दन्त पुपुट चिकित्सा—इसमें खून निकलवा कर तिल चिता और सफेद सरसों इनको समान भाग लेकर गर्म जल में पीस कर कवल धारण करने से दांतों की सूजन अर्थात् दन्त पुपुट रोग ठीक होता है।

३-दन्तवेष्ट (पायरिया) चिकित्सा—नागर मोथा, हरड़ बड़ी बहेड़ा, आंवला, सौंठ, मिर्च, पीपल, वायविडङ्ग, और नीम के पत्ते इन सब को समान भाग लेकर पानी में पीस कर गोली बनालो, इस इस गोली को रातको सोते समय मुंह में रखने से दन्तवेष्ट (पायरिया) तथा दांतों सम्बन्धी सब रोग ठीक हो जाते हैं।

४-शौषिर चिकित्सा—इसमें खून निकलवा कर नागर मोथा, लोध और रसौत का चूर्ण शहद में मिला कर लेप करना चाहिये।

५-परिदर रोग चिकित्सा—शहद, पीपल और घी इनको एकत्र मिला कर मुंह में रखने से परिदर ठीक हो जाता है।

६-उपकुश चिकित्सा—पीपल, सफेद सरसों और फिटकड़ी सोंठ इनका समान भाग ६ माशा एक सेर गर्म पानी में मिलाकर कुल्ले करने से उपकुश रोग ठीक हो जाता है।

७-दन्त नाड़ी चिकित्सा—जावित्री, मांजूफल और कुटकी इनका काढ़ा मुंहमें रखने से दन्तनाड़ी ठीक होजाती है।

८-दन्त हर्ष चिकित्सा—इसमें मुनक्का और सैंधव नमक के काढे से कुल्ला करने से आराम हो जाता है।

९-दन्त शर्करा चिकित्सा—दांतों के ऊपर से चाकू द्वारा धीरे धीरे शकर उतार कर लाख का चूर्ण शहद में मिला कर मलो दांत चमकने लगेंगे।

कपालिका चिकित्सा— नमक और कत्थे को पानीमें मिला कर कुल्ले करने से कपालिका ठीक होती है।

क्रिमिदन्त चिकित्सा— आक, थूहर अथवा पिलखनका दूध दांतों में भरने से अथवा रीङ्गणी (बड़ी कटोरी) का धुंवा देने से एवं तमाखू दांतों के नीचे रखने से कीड़ा मर जाता है। लवङ्ग के तैल का फावा लगाने से भी कीड़ा मर जाता है।

(क)—कत्था २ तोला, मांजू फल २ तोला, कपूर १ तोला, खड़िया मिट्टी ६ तोले, मोलसरी की छाल २ तोले, अकरकरा २ तोले इनका चूर्ण बना कर दन्त मञ्जन करने से दांतों के समस्त रोग ठीक हो जाते हैं।

(ख)—अमृतधारा का फावा दांतों पर लगाने से दन्त पीड़ा शांत हो जाती है।

बाल दन्त चिकित्सा— बच्चों के दांत निकलते समय तरह तरह की तकलीफें होती हैं। यदि दांत निकलते समय सुहागे, चूने को शहद में मिला कर मसूड़ों पर लगाया जावे तो बच्चों को बिना कष्ट के दांत आसानी से निकलते हैं।

पथ्यापथ्य— दांतके रोगी को खट्टे फल शीतल जल रूखा अन्न दांतुन करना और कड़ी चीज खाना मना है।

जीभ के रोगों की चिकित्सा।

वातज जिह्वा रोगमें—वातज ओष्ट रोगके समान चिकित्सा करनी चाहिए।

पित्तज जिह्वा रोग में—खुरदरे पत्ते से घिस कर जिह्वा से रक्त निकाले फिर शतावर गिलोय विदारी कन्द मुलेठी, खैर सार इनको समान भाग लेकर चूर्ण बना कर जीभ पर घिसने या काढे के कुल्ले करने से पित्तज जिह्वा रोग शांत हो जाता है।

कफज जिह्वा रोग में—पूर्ववत् पत्तेसे रक्त निकलवाकर पीपल पीपलामूल, चव्य चित्रे की जड़, सौंठ, इलायची, अजवायन, सेंधा नमक इनका समान भाग लेकर कुल्ले करने से कफज जिह्वा रोग शांत हो जाता है।

उपजिह्वा रोग में—खून निकलवा कर जवाखार को जीभ पर घीसे। लगातार १५ दिन तक इस प्रकार उपचार करने से उपजिह्वा रोग शांत हो जाता है।

शहद में फिटकड़ी फूला मिला कर जीभ पर लगाने से जीभ के छाले मिट जाते हैं।

वायविडङ्ग, पीपल, सेंधव नमक और रसौंत इनका समान भाग का काढा बना कर कुल्ले करने से या इनका चूर्ण जीभ पर मलने से जिह्वा के समस्त रोग शांत हो जाते हैं।

तालु रोग चिकित्सा ।

तालु शुण्डी चिकित्सा—कूठ, कालीमिर्च, वच, सधव नमक, केवटी मोथा इनको पीस छानकर शहद में मिला कर घिसने से तालु शुण्डी रोग ठीक हो जाता है।

गल शुण्डी चिकित्सा—थूहर के दूध का लेप करने से गल शुण्डी रोग शांत हो जाता है।

तालु पाक रोग में—पित्त नाशक क्रिया करनी चाहिए।

तालु शोप रोग में—स्वेदन तथा अन्यान्य वात नाशक चिकित्सा करनी चाहिए।

गल रोग चिकित्सा ।

हरड़ के काढे में शहद मिला कर पीने से गल रोग ठीक हो जाते हैं।

कुटकी, अतीस, देवदारू, पाठो मोथा और इन्द्रजौ इनका समान भाग १ तोला लेकर दो छटांक गोमूत्र में पकावे जब २॥ तोला रह जावे तब उतार कर पिलाने से समस्त कण्ठ रोग ठीक हो जाते हैं।

हल्दी, गुड़, तिल तैल, कणक का चून आमा हल्दी इनकी पुल्टिश वना कर गले के बांधने से सूजन चली जाती है।

सर्वसर मुख रोग चिकित्सा ।

चमेली पत्ते गिलो, दाख, नवासा, दारू हल्दी, हरड़ बड़ी, बहेड़ा, और आंवला इनके काढे में शहद मिला कर गर्म २ कुल्ले करने से मुख पाक या मुंह के छाले और घावोंमें आराम हो जाता है।

एक तोला नीला थोथे को तवे पर जला कर २ सेर पानी में घोल लो और कुल्ले करो। इस से हर प्रकार के मुंह के छाले ठीक हो जाते हैं।

पथ्यापथ्य—लालमिर्च, गुड़, तैल तथा अधिक खट्टे, चरपरे, तीक्ष्ण पदार्थ खाने सर्वथा वर्जनीय हैं। इसमें हरड़ बड़ी का विरेचन अत्यन्त ही हितकर है। कारण कि मुख रोग पेट की खराबी से होते हैं। अतः पेट साफ रखना आवश्यक है। मोलसरी के काथ में तैल पका कर मुंह में लगाने से सब तरह के मुख रोग शांत हो जाते हैं।



* द्वितीय अध्याय *

नासिका की साधारण रचना–

इसका कुछ भाग हड्डियों से तथा कुछ भाग कारटिलेज (तरुणस्थियों) से बना हुआ है, एक परदे के द्वारा इसके दो भाग हो जाते हैं। उनको नासा गुहा कहते हैं, प्रत्येक नासा गुहा में एक प्रकार की श्लेष्मिक कला होती है। उसमें गन्ध ग्रहण करने की शक्ति होती है उसे घ्राण प्रदेश कहते हैं। घ्राण प्रदेश से नाड़ियाँ चलकर घ्राण पिण्ड में जाती हैं और यहीं पर इनका अन्त हो जाता है, घ्राण पिण्ड से नए तार निकल कर घ्राण केन्द्र को जाते हैं इस बीच के मार्ग को घ्राण पथ कहते हैं।

हमें गन्ध ज्ञान कैसे होता है।

हवा में मिले हुए दूषित पदार्थों को नासिका में पैदा हुए बाल रोक लेते हैं। तथा गन्ध द्रव्य अन्दर की तरफ हवा के साथ चले जाते हैं। प्रत्येक नासा गुहा में ऊर्ध्व शुक्ति का तथा उसके सन्मुख परदे की श्लेष्मिक कला का नाम गंध पहिचानने का है इन दोनों स्थान की कला को घ्राण प्रदेश कहते हैं।

घ्राण प्रदेश से गन्ध घ्राण नाड़ियों द्वारा घ्राण पिण्ड को जाती है तथा घ्राण पिण्ड से नए तार निकल कर गन्ध घ्राण पथ के द्वारा घ्राण केन्द्र में जाती है तब ज्ञान होता है कि अमुक गन्ध सुगन्ध या दुर्गन्ध है।

* नासा रोगों की संख्या *

मनुष्य की नाक में चौबीस रोग हैं।

पीनस, पूतिनस्य, नासापाक, पूयशोणित, क्षवथू, भ्रन्शथु, दीप्ति, प्रतिनाह, प्रतिस्राव, नासाशोष, पांच प्रतिश्याम, सात अर्बुद, अर्श, सूजन, रक्तपित्त के भेद से।

पीनस रोग (ओजीना) के लक्षण— वात और कफ के कोप से नाक के अन्दर कफ सूख कर नाक रुक जाती है और गिली रहती है। जिससे सुगन्ध दुर्गन्ध का ज्ञान नहीं होता तथा जीभ तक इसका असर होने से रस ज्ञान भी नहीं होता है। नाक से पीला पानी बहता रहता है। तथा कीड़े भी पड़ जाते हैं, प्रतिश्याप के सब लक्षण इससे मिलते हैं। आधुनिक चिकित्सकों का मत है कि पुराने प्रतिश्याप को ही पीनस कहते हैं।

पूतिनस्य के लक्षण— गला और तालु मूल में कुपित वात पित्त कफ रक्त से मिलकर श्वास को बदबूदार कर देते हैं। इसे पुतिनस्य कहते हैं।

नासापाक के लक्षण— (पुरुबुल इनदीनोज) पित्तके कोप से नाक में फुन्सियां हो कर पक जावें जिससे नाक गिली तथा बदबूदार हो जावे उसे नासापाक कहते हैं।

पुय रक्त के लक्षण— दोषों के बिगड़ने से या ललाट आदि में चोट लगने से नाक से रक्त मिश्रित पीप निकला करती है उसे पूय रक्त कहते हैं।

क्षवथू (स्त्रीलिङ्ग) के लक्षण—शृङ्गाटक नामका जो नाक का मर्म होता है उसमें कुपित हुवा वायु कफ से मिल कर शब्द (आ० छी०) के साथ निकलता है उसे छींक या क्षवथू रोग कहते हैं।

तीक्ष्ण काय फल या तम्बाकू आदि के सूंघने या सूर्य की तरफ से देखने एवं नाक में किसी चीज के द्वारा छींक होती है उसे आगन्तुक छींक कहते हैं।

भ्रंशथु रोग के लक्षण—मस्तिष्कसे अध पका नमकीन कफ सूर्य के सन्ताप से पिघल कर नाक से निकलता है उसे भ्रंशथु रोग कहते हैं।

दीप्ताख्य नासा रोग के लक्षण—श्वास धूम के समान निकलता है। और नाक में जलन होती है उसे दीप्ताख्य रोग कहते हैं।

प्रतिनाह के लक्षण—कफ और वायुसे श्वास मार्ग रुकजाता है उसे प्रतिनाह रोग कहते हैं।

नासास्राव के लक्षण—नाक से पीला सफेद और गाढा कफ (सेढा) निकलता है उसे नासा स्राव कहते हैं।

नासा शोप (ड्राईनेव आफ नोज) वात पित्त के द्वारा नाक का कफ सूख जाता है जिससे श्वास लेने में तकलीफ होती है उसे नासा शोप रोग कहते हैं।

प्रतिश्याप रोग की संप्राप्ति— (सेरीज कटेरह आर कोल्ड इनदी नोज) मल मूत्र का रोकना, अजीर्ण, नाक में धूल घुसना अधिक बोलना अतिक्रोध ऋतुचर्या के विपरीत आहार विहार—धुवां और धूप में रहना, रात में जागना दिन में सोना, ठंडा जल पीना, ठण्डी हवा में रहना, ओस में सोना अधिक मैथुन, अधिक रोना, गाढा कफ सिर में जमना आदि कारणों से वायु कुपित्त होकर प्रतिश्याप (जुकाम) पैदा कर देता है।

प्रतिश्याप के पूर्व रूप— छींक आना, शिरभारी, शरीर का जकड़ना, नाक में जलन, रोमाञ्च होना, गला बैठना तालु फटना आदि इसके पूर्व रूप हैं।

बातज प्रतिश्याप के लक्षण— नाक से पानी बहना, नाक का बन्द होना, तालु, गल और होठों का सूखना, कनपटी में पीड़ा, छींक आना, मुंह का जायका फीका तथा गला बैठना ये लक्षण बातज प्रतिश्याप में होते हैं।

पैत्तिक प्रतिश्याप के लक्षण—इसमें पीला तथा गर्म स्राव नाक से होता है मानों नाक से आग की लपटें निकलती हों शरीर का रङ्ग पीला तथा रोगी दुबला होजाता है।

कफज प्रतिश्याप के लक्षण—नाकसे पीला कफ निकलता है, शरीर का रङ्ग तथा आंखें सफेद प्रतीत होती हैं। शरीर भारी तथा गला, तालु, ओठ, और शिर में खुजली चलती है।

सन्निपातिक प्रतिश्याप के लक्षण—जो प्रतिश्याप पके या बिना पके ही होकर अकस्मात बन्द हो जावे उसे सन्निपातिक समझना चाहिये।

दुष्ट प्रतिश्याप के लक्षण—कभी नाक कफ से गिली हो जावे तथा कभी सूख जावे, कभी बन्द हो जावे तथा कभी खुल जावे श्वास बदबूदार हो और गन्ध का ज्ञान न हो ऐसा प्रतिश्याप बिगड़ा हुआ कहते हैं और यह कष्ट साध्य है।

रक्तज प्रतिश्याप के लक्षण—इसमें नाक से खून निकलता है और आंखें ताम्रेके समान लालहो जाती हैं छातीमें पीड़ा कास ज्वर आदि लक्षण होते हैं श्वास बदबूदार आती है तथा गन्ध का ज्ञान नहीं होता है।

असाध्य प्रतिश्याप के लक्षण—यदि प्रतिश्याप की समय पर ठीक चिकित्सा न की जावे तो वे बिगड़ कर असाध्य होजाते हैं। बाद में नाक से छोटे २ कीड़े सेंढ़ के साथ निकलते हैं और क्रिमिज शिरोरोग से लक्षण मिलते जुलते होते हैं।

प्रतिश्याप के उपद्रव—इसके अधिक बढ़ने से बहरापन नेत्र सम्बन्धी रोग मन्दाग्नी, खांसी आदि उपद्रव होते हैं।

नासा के अन्य रोग—सात प्रकार का आर्बुदरोग (वात, पित्त, कफ, रक्त मांस, मेद, सन्निपातज) चार प्रकार के शोथ। (वात पित्त, कफ, सन्निपातज) चार प्रकार का अर्श। (वात, पित्त, कफ, रक्तज) चार प्रकार का रक्त, पित्त, (वात, पित्त, कफ, सन्निपातज) ये रोग भी नाक में होते हैं किन्तु इनके लक्षण यहां विस्तार भय से नहीं लिखे गये हैं। ये निदान में पृथक देखें।

नाक के रोगों की चिकित्सा।

पीनस रोग चिकित्सा—यदि पीनस रोग होते ही दही में गुड़ और काली मिर्च मिला कर खाना आरम्भ करदे तो बिना कष्ट के पिनस शांत हो जाता है।

सोंठ, पीपल छोटी, इलायची छोटी प्रत्येक तीन २ माशे तथा पुराना गुड़ ८ तोले लेकर कूट पीस और छान कर गोलियां बनालो। इसमें से २ माशे की गोली रात को सोते समय प्रति दिन खाई जावें। तो पीनस रोग शांत हो जाता है।

पूतिनस्य चिकित्सा—कटेरी जड़, दन्ती, बच, सहिंजना तुलसी, सोंठ, काली मिर्च, छोटी पीपल और सैंधा नमक

इनको समान भाग लेकर शिलपर महीन पीस कर लुगदी बनालो, एक छटांक लुगदी और एक पाव दूबका रस इसको पकावो, तैल बाकी रहने पर उतारलो, इस तैल का नस्य लेने से पूतिनस्य तथा दीप्ति रोग ठीक हो जाते हैं।

रक्तपित्त (नकसीर) चिकित्सा—दूब घास का निखालिस रस निकाल कर नस्य लेने से नकसीर तथा रक्तपित्त रोग ठीक होजाता है।

नासार्श चिकित्सा—आकका दूध, थूहर का दूध, करञ्ज बीज कड़वी तुम्बी के पत्ते इनका समान भाग लेकर बकरी के मूत्र में पीस कर लगाने से नाक के मस्से चले जाते हैं।

क्षवथू और प्रंशथु चिकित्सा—घी, गूगल, और मोम की धूनी देने से क्षवथू और प्रंशथु रोग चले जाते हैं।

दीप्ति रोग चिकित्सा—नीम के पत्तों का रस और रसोंत की नस्य लेने से दीप्ति रोग चला जाता है। इसमें नीम के पत्तों का लेप तथा ठण्डे पानी का माथे पर सिंचन करना भी अत्यन्त लाभप्रद है।

नासास्राव चिकित्सा—देवदारु तथा चित्रक छाल के चूर्ण को चिलम में डाल कर तेज धुवां पिलाने से नासास्राव रोग ठीक होजाता है। इसमें बकरी का दूध तथा दही खिलाना भी हितकर है।

नासापाक चिकित्सा—सौवार धोया हुआ नौनी घी तथा कपूर को मिलाकर लगाने से नासापाक तथा नासा शोष रोग ठीक होजाते हैं।

प्रतिश्याय चिकित्सा—अडूषा, मुलेठी, गाजवां, उन्नाव, वनप्सा, अन्जीर, मुनका, मिश्री, इनका समान भाग १॥ तोला लेकर एक पाव पानी में पकावो, जब एक छटांक रह जावे तब छानकर एक तोला शहद मिलाकर पीने से सब प्रकार के प्रतिश्याय शान्त हो जाते हैं। शीतल पदार्थों का सेवन वर्ज्य है।

नासा क्रिमि चिकित्सा—कायफल और वाय विडङ्ग का चूर्ण बना कर सूंघने से प्रतिश्याय तथा नासाक्रिमि नष्ट होजाते हैं।

सम्पूर्ण नासा रोगों पर अचूक योग—

महानारायण तैल, तारपीन तैल, जैतुन तैल, चन्दन तैल, खश तैल, इन पांचों तैलों को समान भाग लेकर नस्य लेने से किसी प्रकार के नासा रोग नहीं होते हैं, और उत्पन्न हुए विभिन्न प्रकार के नासा रोग इस योग के लगातार इस्तेमाल करने से चले जाते हैं। खाश करके दुष्ट प्रतिश्याय के लिए यह "राम बाण" है।

* तृतीय-अध्याय *

कर्ण रोग निदान—

कर्णशूल के लक्षण—अपने कारणों से बढ़ा हुआ वायु उल्टी चाल से चलता हुआ कान में पीड़ा पैदा करता है, इतर दोषों की मिलावट से उन दोषों के भी लक्षण पैदा कर देता है, इसे कर्णशूल कहते हैं और पाश्चात्य चिकित्सक ओटाल्जिया ओटाइटिस के नाम से पुकारते हैं।

कर्ण नाद के लक्षण—कान में वायु के कुपित होने से भेरी मृदङ्ग शंख आदि के विविध शब्द सुनाई देते हैं, इसे कर्णनाद कहते हैं, अंग्रेजी में न्वाईजेस इन दी इयर कहते हैं।

बाधिर्य के लक्षण—कफ युक्त वायु या केवल वायु शब्द वहन करने वाली नाड़ियों (श्रवणनाड़ी) को खराब कर देता है, तब आदमी बहरा (बोला) होजाता है, उसे बाधिर्य कहते हैं। यह इङ्गलिश में डेफनेस के नाम से प्रसिद्ध है।

कर्ण क्ष्वेद के लक्षण—पित्तादि से युक्त वायु कान के पड़दे को खराब कर देता है, जिससे वंशी का सा शब्द सुनाई देता है, उसे कर्ण क्ष्वेद कहते हैं। कर्णनाद और क्ष्वेद में

इतना ही अन्तर है कि नाद में शंख भेरी मृदङ्ग आदि के विभिन्न शब्द सुनाई देते हैं और श्वेद में केवल वंशी का ही शब्द सुनाई देता है।

कर्ण स्राव के लक्षण—(ओटोह्रिया) शिर में चोट लगने से या पानी में डूबने से या कान में फुन्सी होजाने से कान से पीप, खून या पानी बहता है इसे कर्णस्राव कहते हैं।

कर्ण कण्डू और कर्ण गूथ के लक्षण—वायु कफ से मिल कर कान में खुजली पैदा करता है उसे कर्ण कण्डू कहते हैं। वायु और पित्त से कान में कफ सूख कर खूटकी सुरत में हो जाता है उसे कर्ण गूथ या कान का चिट्टा कहते हैं।

कर्ण प्रतिनाह के लक्षण—वह ही कर्ण गूथ (कान का मल) पतला होकर नासिका या मुंह के द्वारा निकलता है उसे कर्ण प्रतिनाह कहते हैं।

क्रिमि कर्ण के लक्षण—कान के भीतर मांस और रक्त के कोप से कफ पित्त और जल की सड़ाहन होती है जिससे छोटे २ कीड़े पड़ जाते हैं। अथवा कान के अन्दर मक्खियां अपने अण्डे छोड़ देती हैं उनसे भी कान में क्रिमि पड़ जाते हैं।

कर्ण में प्रविष्ट पतङ्ग आदि के लक्षण—पतङ्ग कीड़े या कनखजूरे के कान में घुसने से बड़ी बेचैनी और पीड़ा होती है। कान में फरफराहट होती है जब कीड़ा हिलता है तब पीड़ा होती है और नहीं हिलता है तब पीड़ा शांत हो जाती है।

कर्ण विद्रधि के लक्षण—(एब्सेस इन्दीइयर) कान के अन्दर घाव या चोट लगने से अथवा भीतर वातादि के कोप से विद्रधि हो जाती है तो लाल, पीला, गुलाबी रङ्ग का स्राव होता है तथा जलन एवं चूसने जैसी पीड़ा प्रतीत होती है।

कर्ण पाक के लक्षण—(सप्युरेशनइनदी इयर) कर्ण विद्रधि पक जाने से या पानी भर जाने से तथा पित्त के कोप से कान पक जाता है। और भीतर सड़ान पैदा हो जाती है और कान गीला रहता है इसे कर्ण पाक कहते हैं।

पूति कर्णके लक्षण—(फिटिड डिस्चार्ज फ्राम दी इयर) जिस कान से बदबूदार पीप बहती है इसे पूति कर्ण अथवा कान का बहना कहते हैं।

कर्ण, शोथ, अर्बुद, अर्श के लक्षण—(इनफ्लमेशन इन् दी इयर) कान में चार प्रकार का शोथ तथा चार प्रकार का अर्श एवं सात प्रकार के अर्बुद भी होते हैं इनके लक्षण अर्श, शोथ, अर्बुद के समान ही जानना चाहिए।

वातज कर्ण रोग के लक्षण—कान में सांय २ आवाज पीड़ा तथा कान के मल का सूखना पतला स्राव होना और नहीं सुनना वातिक कर्ण रोग के लक्षण हैं।

पित्तज कर्ण रोग के लक्षण—लाल सूजन कान का फटना जलन पीले रङ्ग का बदबूदार स्राव हो तो पित्तज कर्ण रोग जानें।

कफज कर्ण रोग के लक्षण—कुच्छ का कुछ सुनना कड़ी सूजन खुजली सफेद चिकना स्राव और थोड़ी २ पीड़ा हो तो कफज कर्ण रोग जानें।

सन्निपातज कर्णरोग के लक्षण—सन्निपात में दोषों के अनुसार नाना वर्ण के स्राव होते हैं।

परिपोटक के लक्षण—सुकुमारता के कारण बचपन में कान न बढ़ा कर बड़ी अवस्था में कान बढ़ाने से कान की लोर में लाल काली तथा कड़ी सूजन होती है वह साधारण फटी हुई होती है तथा पीड़ा करती है, इसे परिपोटक कहते हैं और यह वायु के कोप से होता है।

उत्पात के लक्षण—भारी गहने के डाल लेने से या चोट से अथवा मलने से पाली में सूजन होती है जिसमें पीड़ा तथा जलन होती है इसे उत्पात कहते हैं, यह रक्त अथवा पित्त रक्त से होता है।

उन्मन्थ के लक्षण—कान को जबरदस्ती बढ़ाने से कान की लोर में वायु कुपित्त होकर कफ की सहायता से विना पीड़ा की सूजन कड़ी पैदा कर देता है और खुजली चलती है इसे उन्मंथ कहते हैं, यह कफ वात से होता है।

दुःखवर्धन के लक्षण—अनभिज्ञ मूढ़ मनुष्य के द्वारा कान छेदने से कान में एक सूजन होजाती है उसमें पाक खुजली तथा पीड़ा होती है इसमें तीनों दोष होते हैं और इसे दुःख वर्धन कहते हैं।

परिलेही के लक्षण—कफ और खून के सड़ने से कान में कीड़े पड़ जाते हैं, ये सरसों के समान होते हैं और फैलकर कानकी पालियां शष्कुली पर जलन पाक एवं पीड़ा युक्त फुन्सियां पैदा करके पाली तथा शष्कुली को चाट जाते हैं उसे परिलेही कहते हैं।

❀ कान की रक्षा के लिए उपयोगी बातें ❀

१—दान्त दर्द नाश करने के लिए कान में कोई दवा न डालो।

२—कान से पीप आदि बहता हो तो रूई लगा कर कान बन्द न करो।

३—कान की भीतरी नली में कभी पुलटिश न बांधो।

४—कान में तैल पानी आदि बिना गर्म किए कभी न डालो।

५—कान की पीप धोने के लिए गर्म जल के अतिरिक्त अन्य वस्तु न डालो।

६—बालक या विद्यार्थी के कान पर कभी तमाचा मत मारो इससे फौरन कान का परदा खराब होकर कान बहना या बहरापन हो जाता है।

७—अगर बहरापन हो तो मस्तिष्क के ऊपर के बाल मत कटाओ।

८—कान में खुजली चलती हो तो अंगुली से खुजाओ तिनका सींक या सलाई कान में न डालो।

९—कान में कोई जीव पड़ जाए तो गर्म पानी से भरदो, जीव मर कर बाहर आजावेगा। तम्बाखू के धुवां से भी जीव मरता है।

१०—कानों में प्रतिदिन तैल गर्म करके डालने से कान के वात पित्त कफ सम्बन्धी रोग नहीं होते हैं।

११—कान में बटन या कौड़ी आदि के घुसने पर अपने आप खराब न करके योग्य चिकित्सक के पास लेजावो जिसके पास निकालने का समान् आदि हो।

* कान की साधारण रचना *

कान के तीन भाग होते हैं। बाह्य कर्ण, मध्य कर्ण तथा अन्तः कर्ण।

बाह्य कर्ण—हमें बाहर से दिखाई देता है और इसमें एक टेढ़ी नली होती है जिसको कर्णाञ्जली कहते हैं। कर्णाञ्जली के आगे एक पड़दा लगा रहता है, जिसको कर्णपटह कहते हैं। कर्णपटह से आगे मध्य कर्ण आरम्भ होता है, मध्य कर्ण में तीन हड्डियां होती हैं जिनमें पहिली को मुद्गर तथा दूसरी को निहाई एवं तीसरी को रकाब कहते हैं। ये हड्डियां एक दूसरी से मिली हुई रहती हैं। तथा इनमें चल सन्धि बनी रहती है, मध्य कर्ण से आगे अन्तकर्ण प्रारम्भ होजाता है। अन्तकर्ण में अर्ध चन्द्राकार नलियां कर्णकुटी तथा कर्णकोकिला होते हैं। और कर्णकोकिला से श्रवण नाड़ियां निकल कर मस्तिष्क के श्रवण केन्द्र को जाती हैं।

हमें किस प्रकार शब्द सुनता है?

शब्द के बाह्य कर्ण को भोंपू पकड़ता है तथा उससे कर्ण पटह पर कंपन होती है और कर्णपटह पर कंपन होने से कर्ण पटह के लगी हुई मुद्गर अस्थि हिलती है मुद्गर से निहाई तथा निहाई से रकाव हिलती है। रकाव कर्ण कुटी पर लगी हुई होती है अतः रकाव के हिलने से कर्णकुटी का तरल हिलता है तथा

कर्णकुटी के तरल के हिलने से कर्णकोकिला का तरल हिलता है। एवं कोकिला का तरल हिलने से श्रवण नाड़ियों में भी कम्पन होता है और वह कम्पन मस्तिष्क के श्रवण केन्द्र में पहुँचता है तब हमें ज्ञान होता है कि अमुक शब्द होरहा है। उपरोक्त कान के भागों में से किसी एक भाग के पुर्जे में कमी आने से हमें सुनना बन्द होजाता है, बुढ़े आदमियों के कान के पुर्जे बिगड़ जाते हैं, अतः वृद्धावस्था में प्रायः मनुष्य बहरे ही होते हैं।

॥ कर्ण रोग चिकित्सा ॥

कर्णशूल चिकित्सा—कर्णशूल में एरण्डी के तैल का जुलाब लें तथा भोजन के बाद घृत पिलावें, अथवा गर्म दूध में घी मिलाकर पिलाने से कर्णशूल ठीक होता है। गर्म करके तिल का तैल कान में डालने से या सुदर्शन का रस कान में टपकाने से अथवा गर्म गोमूत्र को डालने से या शराब एवं स्प्रीट के डालने से कर्णशूल तुरन्त चला जाता है।

स्वर्जिकादि तैल—सज्जी सूखी, मूली हीङ्ग, पीपल, सोंठ और सौंफ इनको बराबर २ लेकर पानी के साथ शिल पर पीसलो इस लुगदी से चौगुना तैल और तैल से चोगुनी कांजी इनको आग पर चढ़ा कर तैल पकालो, इस तैल को कान में डालने से कर्णशूल, कर्णनाद, कर्णबाधिर्य और कर्ण स्राव रोग ठीक होजाते हैं।

कर्णस्राव, पूतिकर्ण, और कृमिकर्ण की चिकित्सा

(१) बीजोरे निम्बू के रस में सज्जी खार मिलाकर कान में डालने से कान बहना कान का दर्द एवं जलन ठीक हो जाती है।

(२) कान में गुग्गुल की धुनी देने से पूतिकर्ण कान की दुर्गन्ध ठीक हो जाती है।

(३) हरताल पीली को महीन पीस कर गोमूत्र में मिलाकर कान में डालने से कान के कीड़े मरजाते हैं।

(४) नीम के पत्तों का पानी बनाकर या रांग जड़ का पानी बनाकर कवोष्ण से पिचकारी द्वारा कान साफ करने से मवाद आदि बाहर आजाते हैं, और कान साफ हो जाता है।

कर्णपालीवर्धक योग—नई सफेद मूसली को पीस कर भैंस के नोनी घी में मिला कर सात दिन तक धान के ढेर में गाड़ दिया जाए फिर निकाल कर पाली पर लगाने से पाली बढ़ जाती है।

उन्मन्थ चिकित्सा—कलिहारी की लुगदी शतावर की लुगदी, गोह की चरबी इनका समान भाग तथा इनसे चौगुना तिल का तैल और तैल से चौगुना पानी लेकर पकावे, तैल २

बाकी रहने पर छानलो। इस तैल के लगाने से उन्मन्थ रोग यानी पाली की खुजली पीड़ा तथा सूजन ठीक होजाती है।

दुःखवर्धन चिकित्सा—तैल से पाली को चुपड़ कर आम तथा जामुन के पत्तों का चूर्ण बुरकाने से दुःख वर्धन रोग ठीक होजाता है।

परिलोही चिकित्सा—बकरी के मूत्र में कपूर पीस कर लेप करने से परिलोही चला जाता है।

कर्ण उत्पात चिकित्सा—जामुन के पत्तों का रस एक पाव तथा एक पाव आम के पत्तों का रस एवं एक सेर कांजी में एक पाव तैल पकावो जब तैल २ अविशिष्ट रहे तब छान लो, इस तैल की मालिश करने से, कर्ण उत्पात रोग ठीक हो जाता है।

कान के घाव नाशक योग—देशी शराब में हल्दी का चूर्ण डालकर कान में घालने से कान के सम्पूर्ण घाव ठीक हो जाते हैं तथा कान के कीड़े मर जाते हैं।

कर्णशोथ चिकित्सा—आंवले १ तोला तथा हल्दी २ तोला इनको मोर के अण्डे के रस में घोट कर लेप करने से कर्ण शोथ तथा कर्ण मूल भयंकर से भयंकर ही ठीक होजाता है।

कान से पानी निकालने के उपाय—अगर कान में पानी रह जावे तो छींको या खांसो और शिर को उस तरफ झुकाए रखो जिस तरफ के कान में पानी भरा हो। अथवा तिल का तैल गर्म करके कान में टपकाओ या हथेली कान पर रख कर एक पैर से खड़े होजाओ और जिस तरफ के कान में पानी हो उस तरफ शिर को झुकादो।

अर्क तैल—आक के पीले पत्तों का रस एक पाव तथा ऊंट का मूत्र एक पाव एवं तिल का तैल एक छटांक इन सबको एक लोहे के बर्तन में डालकर पकाओ जब तैल बाकी बचे तब छानकर एक शीशी में भरलो इस तैल को कान में डालने से कान संबन्धी सम्पूर्ण रोग ठीक हो जाते हैं। प्याज का रस एवं अमृतधारा डालने से बहरापन तथा कर्णशूल ठीक होती हैं।

तिल तैल प्रयोग—

तिलों के तैल को गर्म करके प्रातःकाल डालने से कफ उत्पन्न कान का दर्द शान्त होता है। तथा मध्यान्ह में डालने से पित्त से उत्पन्न हुवा, तथा शाम को डालने से वायु का दर्द शान्त होजाता है। एवं प्रतिदिन डालने से कान सम्बन्धी रोग कभी भी नहीं होते हैं। कान से मैल निकालने वाली सलाई से कान साफ करने चाहिए, जिससे कान में (कर्णगूथ) मल पैदा न हो सके, कारण कि कर्णगूथ से भी प्रायः बहरापन हो जाता है।

* चतुर्थ-अध्याय *

चक्षु की साधारण रचना—

हड्डियों के बने हुए गढ़े में पलक तथा पलकों पर लगे हुए लोमों से सुरक्षित अक्षिगोलक रहता है। इसके सफेद भाग को कनीनिका तथा काले भाग को उपतारा कहते हैं। और उपतारा के मध्य गहरे काले भाग को तारा कहते हैं। तारा के बीच में गोल छिद्र जिसमें प्रत्येक वस्तुका बिम्ब दिखाई देता है उसको दृष्टि कहते हैं। नेत्र की आन्तरिक रचना चित्र खेंचने वाले कैमरे से मिलती जुलती होती है, इसमें तीन अगला, पिछला तथा बृहत् कोष्ठ होते हैं। अगले से पीछे तथा पिछले से आगे तारा के पीछे भीतरी भाग में चक्षुताल लगा हुवा होता है, चक्षुताल से आगे अन्धकार युक्त बृहत कोष्ट होता है जिसमें स्वच्छ द्रव भरा रहता है तथा अन्तरीय या सांवेदनिक पटल होता है इस पटल पर एक पीला धब्बा होता है जिसको पीत बिन्दू कहते हैं, पीत बिन्दू में जो गढ़ा होता है उसको पीत बिन्दू नाभि कहते हैं, इसके नजदीक ही कुछ दूरीपर चक्षु बिम्ब होता है जिससे दृष्टि नाड़ियां निकल दाहिने नेत्र की मस्तिष्क के बाएं भाग को तथा बाएं नेत्र की दाहिनी भाग को जाती हैं जहां ये नाड़ियां एक दूसरी के ऊपर से गुजरती हैं,

उस भाग को दृष्टि नाड़ी योजिका कहते हैं। दृष्टि नाड़ी योजिका के अग्रिम भाग को दृष्टि पथ कहते हैं। दृष्टि पथ से होकर ये नाड़ियां मस्तिष्क के दृष्टि केन्द्र को जाती हैं और वहां पर इनका अन्त हो जाता है।

हमें दिखाई किस प्रकार देता है?

आदि में प्रकाश की किरणें कनीनिका पर पड़ती हैं कनीनिका में से होकर वे चक्षु के भीतर प्रवेश करती हैं और तारा ताल तथा बृहद् कोष्ठ में रहने वाले स्वच्छ द्रव में से होकर वे दृष्टि पटल पर पड़ती हैं। इस पटल पर वस्तु का प्रतिबिम्ब बनता है और यह प्रतिबिम्ब उल्टा होता है जैसे हम दूसरे मनुष्य को देख रहे हैं। तो प्रतिबिम्ब में पैर ऊपर तथा शिर नीचे दिखाई देता है जैसा कि छाया चित्रण यन्त्र में होता है।

प्रकाश की किरणों से आन्तरीय या सांवेदनिक पटल की सेलों में एक विचित्र रासायनिक प्रक्रिया होती है, इसी प्रक्रिया का प्रभाव दृष्टि नाड़ी द्वारा मस्तिष्क के दृष्टि केन्द्र को पहुँचता है और हमको रङ्ग आकार आदि का ज्ञान होता है।

* नेत्र रोग वर्णन *

नेत्र रोग के कारण—

गर्मी या धूप से सन्तप्त होकर शीतल पानी में प्रवेश करने से, दूर के पदार्थ देखने से, नींद आने पर या समय पर न सोने से, दिन में सोने या रात में जागने से, अग्नि आदि के अधिक सेवन करने से, नेत्रों में धूल या धुवां जाने से, वमन का वेग रोकने या अधिक वमन से, तरल पदार्थ अधिक खाने से, खट्टे रसों का अधिक सेवन करने से, मल मूत्र और अपान वायु के रोकने से, बहुत दिनों तक रोने से, शोक जन्य संताप से, मस्तक में चोट आदि के लगने से, अत्यंत तेजी से चलने वाली सवारी पर बैठने से, ऋतु चर्य्या में लिखी विधियों के विपरीत चलने से, काम क्रोधादि की वजह से पैदा हुई पीड़ा से, अत्यंत मैथुन करने से, आंसुवों का वेग रोकने या बारीक छापे के अक्षर देखने से नेत्रों में तरह २ के रोग पैदा होजाते हैं। बिजली तथा किराशमी (मिट्टी के) तैल की रोशनी से आजकल बहुत से लोग अकाल में शीघ्र ही अंधे होजाते हैं। और उनको चश्मा लगाना पड़ता है। मनुष्य शरीर में नेत्र सब से मूल्यवान अंग है, नेत्र हैं तो जहान है अतः नेत्रों की रक्षा करना मनुष्य का मुख्य कर्तव्य है

नेत्र रोगों की संख्या—

नेत्र सन्धि में ६, पलक में २१, श्वेत भाग में ११, कृष्ण भाग में ४, सारे नेत्र में १७, आंख की पुतली में १२, बाहरी भाग में २, इस प्रकार कुल आंख के ७६ रोग हैं।

दृष्टि रोग वर्ण—

दृष्टि के लक्षण—नेत्र के काले डले के बीच में मसूर की दाल के समान क्षण में पट खोजने के समान, क्षण में अग्नि के प्रकाश के समान चिरस्थायी तेजों से सिद्ध जो चीज है उसे ही दृष्टि कहते हैं।

नेत्र में चार पटल—

ऊपर का पहला पटल रस के आश्रय रहता है दूसरा पटल मांस के, तीसरा मेद के और चौथा हड्डियों के आश्रय रहता है।

भीतर से पहिले पटल में दोष—

पहिले पटल में दोष के रहने से मनुष्य रूपों को कुछ कुछ अन्तर से देखता है। यदि दोष कम होजाता है तो साफ भी देखने लगता है।

दूसरे पटल में दोष—

दूसरे परदे में दोष होने से कोई भी वस्तु भली भांति दिखाई नही देती और विना हुई वस्तुवें दिखाई देती हैं, जैसे मक्खी मच्छर आदि। एवं दूर की वस्तुवें पास में और पास की दूर दिखाई देती हैं। तथा सूई में धागा नहीं पिरो सकता है।

तीसरे पटल में दोष—

तीसरे परदे में दोष होने पर उपर की वस्तुवें कपड़े से ढ़की हुई सी प्रतीत होती हैं और नीचे की वस्तुवें बिल्कुल दिखाई नहीं देती हैं। आदमी आंख कानों से विहीन विरूप दिखाई देता है यदि दृष्टि में वायु की अधिकता होगी तो दृष्टि का स्याह रङ्ग होगा, यदि पित्त की होगी तो पीला एवं कफ की अधिकता होगी तो सफेद रङ्ग होगा इसे तिमिर रोग कहते हैं, कुछ लाल रङ्ग होने पर काच भी कहते हैं।

चोथे पटल के दोष—

चोथे परदे में दोष होने से दृष्टि को चारों ओर से रोक लेता है इसे लिङ्गनाश (मोतियाबिन्द) भी करते हैं, इसके प्रारम्भ में बिजली, सूरज चन्द्रमा, आदि की रोशनी दिखाई देती हैं परन्तु पृथ्वी पर बिना चमकदार कोई वस्तु दिखाई नही देती है और पृथ्वी पर अन्धकार ही नजर आता है।

❀ दृष्टि रोगों के नाम ❀

वातज लिङ्ग नाश	कफज लिङ्ग नाश	पित्तज लिङ्ग नाश
रक्तज लिङ्ग नाश	सन्निपातज लिङ्ग नाश	परिम्लाई लिङ्ग नाश
पित्त विग्ध दृष्टि	कफ विग्ध दृष्टि	धूमदर्शी
ह्रस्व जात्य	नकुलान्ध्य	गम्भीरिका

वातज लिङ्ग नाश के लक्षण (मोतियोकेटैरक्ट)

तृतीय पटल का दोष चतुर्थ पटल में आजाता है उसे ही लिङ्ग नाश (मोतियाबिन्द) नीलिका कहते हैं, इसमें वात प्रधान होने से घूमती हुई टेढ़ी एवं लाल वस्तुयें दिखाई देती हैं

पित्तज लिङ्ग नाश—

इसमें सूरज, जुगनू, इन्द्र धनुष, और बिजली की सुरतें एवं नाचते हुए मोर की पूंछ के समान सब चीजें नीली दिखाई देती है।

कफज लिङ्ग नाश—

इसमें आकाश बादलों से घिरा तथा सब वस्तुयें पानी से भीगी हुई सी दिखाई देती हैं।

रक्तज लिङ्ग नाश—

इसमें सब वस्तुयें लाल एवं काली दिखाई देती हैं, और तमाम सफेद (व्हाइट) चीजें भी काली एवं लाल दिखाई देती हैं।

त्रिदोषज लिङ्ग नाश—

इसमें तीनों दोषों के लक्षण नजर आते हैं।

परिम्लायी लिङ्ग नाश—

रक्त से मिल कर पित्त परिम्लायी नाम का लिङ्ग नाश पैदा कर देता है। जिससे सब दिशाएं पिली चारों तरफ जुगनू आग एवं सूरज नजर आते हैं।

दोष भेद से मोतिया बिन्द का रंग

वात के लिङ्ग नाश में रङ्ग लाल होता है। पित्त के लिङ्ग नाश में पीला तथा नीला होता है, कफ से सफेद रक्त से लाल एवं सन्निपात से आंख का रङ्ग विरङ्गा होता है।

पित्त विदग्ध दृष्टि के लक्षण—(डेब्लाइन्डनेस आरहेमेरेलोपिया) कुपित पित्त दृष्टि के पहले और दूसरे पटल में जाकर उसे पीला कर देता है। जिस से सम्पूर्ण वस्तुवें पीली दिखाई देती हैं। इसे पित्त विदग्ध दृष्टि कहते हैं। पित्त जब तीसरे पटल में पहुंचता है तब दिन में सूरज की गर्मी से पित्त कम न होने से दिन में कुछ भी दिखाई नहीं पड़ता परन्तु रात को ठंडक की वजह से पित्त कम पड़ जाता है। अतः रात को दिखाई पड़ता है इसे दिवान्ध्य कहते हैं। हिन्दी में इसे दिनौंन्धो कहते हैं।

श्लेष्म विदग्ध दृष्टिके लक्षण--(नाइट ब्लाइन्डनेस आरनिक

टालोपिया) नेत्र के पहले दूसरे परदे में कफ के होने से दृष्टि मण्डल सफेद पड़ जाता है और सब वस्तुवें सफेद ही नजर आती हैं। कफ से तीसरे पटल में जाने से रात के कफ के कम न होने से दिखाई नहीं देता परन्तु दिन में सूरज की गर्मी से कफ कम हो जाता है अतः दिन में दिखाई देता है इसे नक्तान्ध्य कहते हैं । हिन्दी में इसे रतोन्धी कहते हैं।

धूम दर्शी के लक्षण—

शोक ज्वर परिश्रम एवं शिर में चोट लगने से पित्त कुपित हो कर तीसरे परदे में चला जाता है तो सब चीजें धूमाकृत (धूंधली) दिखाई देती है इसे धूम दर्शी कहते हैं।

ह्रस्व जात्य के लक्षण—

पित्त कुपित्त होकर दृष्टि में आजाता है जिस से दिन में मनुष्य बड़ी कठिनाई से बड़ी वस्तुवों को भी छोटे रूप में देख पाता है। इसे ह्रस्व जात्य कहते हैं।

गम्भीरिका के लक्षण—

वायु के कोप से दृष्टि मण्डल धंस जाता है तथा पीड़ा होती है। इसे गम्भीरिका कहते हैं।

नकुलान्ध्य के लक्षण—

. जिसकी दृष्टि नकुल (नेवला) की आंख के समान चमकती हो तथा रङ्ग विरङ्गा दिखाई दे उसे नकुलान्ध्य कहते हैं।

आगन्तुज लिङ्ग नाश—

चरक के मत से दो लिङ्ग नाश और हैं, एक निमित्त से और दूसरा विना निमित्त के ।

निमित्त लिङ्ग नाश—विषेले पेड़ की हवा लगने से शिर और नेत्र का खून बिगड़ने से होता है, और देखने की शक्ति नष्ट होजाती है ।

अनिमित्त लिङ्ग नाश—सूरज, तथा भयंकर सर्प आदि के देखने से होता है, अचानक उपरोक्त वस्तुवें के देखने से आंख चकाचौंध हो जाती है । और आंख का रङ्ग पहिले जैसा ही रहता है बदलता नहीं ।

कृष्ण मण्डल गत रोग—

सव्रण शुक्र, अव्रण शुक्र, पाकात्य, अजका, ये चार रोग होते हैं ।

सव्रण शुक्र (घाव सहित फूला) के लक्षण—

नेत्र के काले भाग में गढ़ेदार फूला हो उसमें पीड़ा हो तथा पानी गर्म २ बहता हो उसे सव्रण शुक्र कहते है ।

अव्रण शुक्र के लक्षण—

आंख दूखने से पैदा हुआ फूला शङ्ख या चन्द्रमा के समान सफेद होता है उसे अव्रण शुक्र कहते हैं वह साध्य होता है ।

अक्षिपाकात्यय के लक्षण—

अगर दोषों की वजह से नेत्रों के काले हिस्से में सफेदी फैल जावे तो उसे पाकात्यय कहते हैं।

अजका के लक्षण—

बकरी की मींगणी के समान पीड़ा वाली ललाई लाल और चिकने आंसू वाली जो ऊंचाई नेत्र के काले भाग में होती है उसे अजका जात कहते हैं।

नेत्र के सफेद भाग में होने वाले रोग।

प्रस्तार्यर्म, शुक्लार्म, रक्तार्म, अधिमांसार्म, स्नाय्वर्म, शुक्ति, अर्जुन, पिष्टक, शिराजाल, शिराज पीड़िका, बलास ग्रथित यह ११ रोग नेत्र के सफेद भाग में होते हैं।

प्रस्तार्यर्म के लक्षण—

आंख के सफेद भागमें पतला फैला हुआ ललाई या सुर्खी मायल जो सफेद चिन्ह होता है उसे प्रस्तार्यर्म कहते हैं।

शुक्लार्म के लक्षण—

आंख के सफेद भाग में जो बहुत ही सफेद और कोमल चिह्न होता है। उसे प्रस्तार्यर्म कहते हैं।

रक्तार्म के लक्षण—

आंख के सफेद भाग में जो लाल और नर्म मांस बढ़ता है उसे रक्तार्म कहते हैं।

अधिमांसर्म के लक्षण—

आंख के सफेद भाग में विस्तीर्ण नर्म गाढा और किसी कदर ललाई लिए जो मांस बढ़ता है उसे अधिमांसार्म कहते हैं।

स्नायर्म के लक्षण—

आंख के सफेद भाग में जो कठिन फैलने वाला और स्राव रहित जो ऊंचा मांस होता है उसको स्नाय्वर्म कहते हैं।

शुक्ति के लक्षण—

नेत्र के सफेद भाग में काले रङ्ग का जो मांस बिन्दू होता है, अथवा जो सीपसी होती है उसे शुक्ति कहते हैं।

अर्जुन के लक्षण—

आंख के सफेद भाग में खरगोश के खून जैसी एक बिन्दू होती है उसे अर्जुन कहते हैं।

पिष्टक के लक्षण—

आंख के सफेद भाग में कफ और वायु के प्रकोप से चूने के समान सफेद और मैल से भरे हुए आइने की तरह जो ऊंचा मांस होता है उसे पिष्टक कहते हैं।

शिराजाल के लक्षण—

आंख के सफेद भाग में जाले के समान कठिन शिराओं से व्याप्त जो लाल शिराओं का समूह होता है उसको शिराजाल कहते हैं।

शिराज पीड़िका के लक्षण—

आंख के सफेद भाग में काले भाग के पास शिराओं से घिरी हुई जो सफेद फुन्सियां होती हैं उन्हें शिराज पीड़िका कहते हैं।

बलास ग्रथित के लक्षण—

आंख के सफेद भाग में कांसी के समान सफेद कठिन और जल की बून्द के समान ऊंची जो बून्द होती है उसे बलास ग्रथित कहते हैं।

❀ वर्त्मज (पलक) रोगों का वर्णन ❀

उत्सङ्गिनी, कुम्भिका, पोथकी, वर्त्मशर्करा, अर्शोवर्त्म शुष्कार्श, अञ्जन नामिका, बहलवर्त्म, वर्त्मबन्धक, क्लिष्टवर्त्म वर्त्मकर्दम, श्याववर्त्म, प्रक्लिन्नवर्त्म, अक्लिन्नवर्त्म, वातहतवर्त्म, वर्त्मार्बुद, निमेष, शोणितार्श, लगण, बिषवर्त्म, कुञ्चन ये पलकों में २१ रोग होते हैं।

उत्सङ्गिनी के लक्षण—

नीचे पलक में एक फुन्सी होती है उसका मुंह भीतर होता है तथा बाहर की तरफ उठी हुई दिखाई देती है, उसके चारों ओर छोटी २ फुन्सियां होती हैं, ये लाल वर्ण की तथा पीड़ा और खुजली युक्त होती हैं उसे उत्सङ्गिनी कहते हैं।

कुम्भिका के लक्षण—

पलक के किनारे कुम्भिका के बीज के समान फुन्सी होती है यह फूटती है बहती है और फिर मवाद भर जाती है और फिर बहा करती है उसे कुम्भिका कहते हैं। और वह सन्निपात से होती है।

पोथकी के लक्षण—

पलक में लाल सरसों के समान छोटी २ फुन्सियां होती हैं। उनमें पीड़ा खुजली और भारीपन रहता है। और स्राव होता है उसे पोथकी कहते हैं।

वर्त्म शर्करा के लक्षण—

पलक के अन्दर खरदरी एक बड़ी पीड़िका होती है उसके चारों ओर छोटी २ फुन्सियां होती हैं, यह पलक को खराब कर देती हैं इसे वर्त्म शर्करा कहते हैं।

अर्शोवर्त्म के लक्षण—(ग्रेनुलर कानज कटि विटिस)

पलक में ककड़ी के बीज के समान चिकनी खरदरी फुन्सियां होती हैं, इनमें पीड़ा कम होती है इसे अर्शोवर्त्म कहते हैं।

शुष्कार्श के लक्षण—

पलक के अन्दर खरदरे कड़े पीड़ा करने वाले मांस के लम्बे २ अंकुर होते हैं इसे शुष्कार्श कहते हैं।

अञ्जन नामिका के लक्षण—(स्टाई)

रक्त के कोप से पलक के अन्दर छोटी मुलायम लाल रङ्ग की फुन्सि होती है और इसमें पीड़ा होती है, हिन्दी में घुमारी या बिलाई कहते हैं।

बहुल वर्त्म के लक्षण—

पलक के अन्दर समान रङ्गकी बहुतसी पीड़ादार फुन्सियां हो जाती हैं उसे बहुल वर्त्म कहते हैं ये सन्निपात से होती है।

वर्त्म बन्धन के लक्षण—

पलक में सूजन होजाती है जिसमें खुजली एवं पीड़ा होती है। और आंख ठीक तरह से बंध नहीं होती इसे वर्त्म बन्धन कहते हैं।

क्लिष्ट वर्त्म के लक्षण—

कफ रक्त के कोप से दोनों पलकें मुलायम हो जावें ताम्र वर्ण की तथा लाल होजावें और थोड़ी २ पीड़ा हो उसे क्लिष्ट वर्त्म कहते हैं।

वर्त्म कर्दम के लक्षण—

क्लिष्ट वर्त्म रोग में पित्त कारक आहार विहार करने से पित्त कुपित्त होकर जब खून में अधिक दाह पैदा कर देता है। और पलक गीली होजाती है उसे वर्त्म कर्दम कहते हैं।

श्याव वर्त्म के लक्षण—

वातधिकसन्निपात से पलक बाहर तथा भीतर से काली होजाती है पीड़ा तथा दाह होती है इसे वर्त्म श्याव कहते हैं।

प्रक्लिन्न वर्त्म के लक्षण—

जिसके पलक के अन्दर सूजन होजाती है और उसके आस पास क्लेद हो तो उसे प्रक्लिन्न वर्त्म कहते हैं।

अक्लिन्न वर्त्म के लक्षण—

विना पके ही जिसके पलक परस्पर में चिप जावें और वार २ धोने पर भी चिपक जावें उसे अक्लिन्न वर्त्म कहते हैं।

वातहत वर्त्म के लक्षण—(टासिस)

जिसकी पलक तथा शुक्ल भाग की सन्धि अलग होजाती है तथा पलक झपती नहीं, पीड़ा कभी होती है और कभी नहीं भी होती उसे वातहत वर्त्म कहते हैं।

अर्बुद के लक्षण—

पलक के अंदर टेढ़ा मेढ़ा कम पीड़ा करने वाला कुछ लाल और शीघ्र बढ़ने वाला या लटकता हुआ मांस की सूरत में मांसांकुर होजाता है उसे वर्त्मार्बुद कहते हैं।

निमेष के लक्षण (ब्लेफेरोस्पैजम)

पलक को खोलने वाली शिरायें वायु प्रविष्ट होकर पलक को ढीला कर देती है जिससे पलक बंद या खुल नहीं सकता इसे निमेष कहते हैं और यह असाध्य है।

शोणितार्श के लक्षण—(ग्रेनुलर कौनजंकटिविटिज)

खून की खराबी से पलक के अंदर लाल रङ्ग का मांस का अंकुर होता है उसे वार २ काटने पर भी बढ़ता ही रहता उसे शोणितार्श कहते हैं।

लगण के लक्षण—

पलक में कड़ी मोटी एक गांठ होती है जोकि पकती नही और उसमें थोड़ी २ पीड़ा होती है उसे लगण कहते हैं यह कफ से पैदा होता है।

विष वर्त्म के लक्षण—

तीनों दोष कुपित होकर आंख की पलक के बाहर सूजन करके अंदर छिद्र होते हैं जिन से पानी बहता है उसे विषवर्त्म कहते हैं।

कुञ्चन के लक्षण—

वातादि दोषों से पलक बंद होजाते हैं खुलते नहीं जिससे कुछ भी दिखाई नही देता इसे कुञ्चन रोग कहते हैं।

पलकों की बालों के रोग।

पलकों के बालों में पक्ष्य कोप, और पक्ष्य शात ये दो रोग होते हैं।

पक्ष्य कोप के लक्षण—

पलकों के बाल मुड़कर आंख के सफेद या काले भाग से रगड़ खाते हैं जिससे बड़ी पीड़ा होती है। और आंख लाल हो जाती हैं बाल उखड़ २ कर गिर पड़ते हैं इसे पक्ष्य कोप कहते हैं। यह रोग बड़ा दारुण है।

पक्ष्म शात के लक्षण

पलक में जो बाल होते हैं उनकी जड़ों में रहने वाला पित्त उनको पका देता है जिससे बाल गिर जाते हैं और खुजली तथा जलन पैदा होती है इसे पक्ष्म शात कहते हैं।

दृष्टि सन्धियों में होने वाले रोग—

पूयालस, उपनाह, पित्तस्राव, कफ स्राव, सन्निपात स्राव रक्त स्राव, पर्वणी, अलजी, जतुग्रन्थी ये नौ रोग होते हैं।

पूयालस के लक्षण—

पूयालस रोग दृष्टि की संधी में होता है संधी में सूजन होती है और उसमें बदबूदार और गाढी राध आती है।

उपनाह के लक्षण—

दृष्टि संधी में बड़ी कम पकने वाली अधिक खुजली वाली लाल सख्त थोड़े दर्द वाली गांठ पैदा होती है। उसे उपनाह कहते हैं।

पित्तज स्राव के लक्षण—

सन्धि के बीच में लाल और पीला मिला हुआ अथवा केवल पीला और गर्म जल बहता है उसे पित्तज स्राव कहते हैं।

कफज स्राव के लक्षण—

अगर सफेद गाढा और चिकना स्राव होता हो तो उसे कफज स्राव कहते हैं।

सन्निपातज स्राव के लक्षण—

सन्धियों में पकने वाली सूजन शवत्र होवी हो तो उसे सन्निपातज स्राव समझो।

रुधिर जन्य स्राव के लक्षण—

स्राव गर्म हो और उसमें विशेष खून बहता हो तो उसे रुधिर जन्य स्राव कहते हैं।

पर्वणी के लक्षण—

सन्धि में गोल सूजन वाली लाल बारीक जलने वाली और पकने वाली जो फुन्सी होती है उसे पर्वणी कहते हैं।

अलजी के लक्षण—

लाल और सफेद फुन्सियों से व्याप्त एक फुंसी संधि में होवी है। उसे अलजी कहते हैं।

जतुग्रान्थि के लक्षण—

पलक और पलक रोमों की संधियों में उत्पन्न होने वाली अनेक आकृति वाली कीड़े और खुजली उत्पन्न करने वाली और नेत्र को बिगाड़ २ कर पलक और सफेद भाग की संधियों में आने वाली ग्रान्थिको जतुग्रान्थि कहते हैं।

❀ सारी आंखों में होने वाले रोग ❀

वाता भिष्यन्द, कफा भिष्यन्द, पित्ता भिष्यन्द, रक्ता भिष्यन्द, वाता भिष्यन्द जन्य अधिमन्थ, पित्ता भिष्यन्द जन्य अधिमन्थ, कफा भिष्यन्द जन्य अधिमन्थ, रक्ता भिष्यन्द जन्य अधिमन्थ, सशोथ पाक, अशोथ पाक, हताधिमन्थ, वातपर्यय, शुष्काक्षिपाक, अन्यतोवात, अम्लाध्युषित, शिरोत्पात, शिरा हर्ष ये १७ रोग सारी आंखों में होते हैं।

वाताभिष्यन्द के लक्षण—

तोड़ने या भोंकने जैसी पीड़ा हो जड़ता रोमाञ्च तथा खुजली चले, नेत्रों में रूखापन, तथा शिर में दर्द, नेत्र न चिपकें और शीतल आंसू आवें तो वाताभिष्यन्द समझना चाहिए।

पित्ताभिष्यन्द के लक्षण—

नेत्रों में जलन तथा पाक हो शीतल पदार्थों की इच्छा हो नेत्रों से धुवां सा निकलता हो तथा पीले हों तो पित्ताभिष्यन्द समझना चाहिए।

कफाभिष्यन्द के लक्षण—

नेत्रों में भारीपन खुजली तथा कीचड़ अधिक हो आंखें चिपकें शीतलता अधिक हो और सूजन न हो गर्म पदार्थों की इच्छा, आंखों का अधिक स्राव कफाभिष्यन्द में होता है।

रक्ताभिष्यन्द के लक्षण—

आंसू तथा नेत्र लाल हों आंख की शिनस लाल होजावें

तथा पित्ताभिष्यन्द के भी लक्षण मिलते हों तो रक्ताभिष्यन्द समझना चाहिए। अभिष्यन्द आंख दूखनी को कहते हैं।

अधिमन्थ के लक्षण—

आंख दुःखनी आने पर यदि उनकी उचित चिकित्सा न की जावे तो आधे माथे में भी मन्थन जैसी पीड़ा होती है उसे अधिमन्थ रोग कहते हैं। मारवाड़ी में (धोमा) के नाम से यह रोग प्रसिद्ध है। जिस प्रकार अभिष्यन्द चार होते हैं उसी प्रकार अधिमन्थ भी चार प्रकार का होता है और लक्षण भी दोषानुसार वैसे ही होते हैं, विशेषता इतनी ही है कि आधे माथे या शंख देश में पीड़ा विशेष अधिमंथ में होती है और अभिष्यंद में नहीं होती।

कफाभिष्यन्द से होने वाला अधिमन्थ सात रात में दृष्टि का नाश कर देता है।

रक्ताभिष्यन्द से होने वाला अधिमन्थ पांच रात में दृष्टि का नाश कर देता है।

वाताभिष्यन्द से होने वाला अधिमन्थ छः रात में दृष्टि का नाश कर देता है।

पित्ताभिष्यन्द से होने वाला अधिमन्थ तीन दिन में दृष्टि का नाश कर देता है।

सशोथ पाक के लक्षण—

नेत्रों में चिपकना, खुजली, आंसुवों से भरे रहना सूजन पके हुए हों तो सशोथ पाक समझना चाहिये।

अशोथ पाक के लक्षण—

उपरोक्त सशोथ पाक के सभी लक्षण हों केवल सूजन न हो तो उसे अशोथ पाक कहते हैं ।

हताधिमन्थ के लक्षण—

वाताभिष्यन्द से पैदा हुवा अधिमन्थ की ठीक तरह से चिकित्सा न की जावे तो भयङ्कर पीड़ा होती है, और पीड़ा से आंख नष्ट हो जाती हैं तब उसे हताधिमन्थ कहते हैं ।

वात पर्यय के लक्षण—

जब वायु भुवां तथा नेत्रों में बार २ घूमता है और पीड़ा करता है उसे वात पर्यय रोग कहते हैं ।

शुष्काक्षि पाक के लक्षण—

यदि पलकोंमें रुक्षता हो जिससे आंखें मिची रहें तथा पीड़ा हो, जलन हो, तथा ठीक तरह से दिखाई न पड़े खोलते समय आंख विकृत हो तो शुष्काक्षि पाक समझना चाहिए ।

अन्यतो वात के लक्षण—

एक स्थान में रहने वाला वायु दूसरे स्थान में जाकर कान, शिर, ठोडी, मन्यानाड़ी और पृष्ट वंश की वायु नेत्र और भुवों में तीव्र वेदना करती है तब अन्यतोवात रोग कहते हैं ।

अम्लाध्युषित के लक्षण—

खट्टे रस खाने से नेत्र काले, लाल, कोने वाले जलनयुक्त, सूजन और स्राव युक्त होते हैं, तब अम्लाध्युषित रोग कहते हैं ।

शिरोत्पात के लक्षण—

वेदना रहित या सहित नेत्र की शिरा लाल तथा बार २ विकृत हो जावें उसे शिरोत्पात रोग कहते हैं।

शिराहर्ष के लक्षण—

शिरोत्पात की चिकित्सा न होने से शिराहर्ष रोग होजाता है। इसमें आंखें लाल तथा स्राव युक्त होती हैं पानी तथा कीचड़ बहता है, तथा दिखाई नहीं पड़ता उसे शिराहर्ष कहते हैं।

निराम नेत्रों के लक्षण—

आंखों में वेदना तथा लाली ज्यादा हो तथा भोंकने की सी पीड़ा एवं शूल होती हो तथा आंसू गिरते हों तो साम नेत्र समझने चाहियें, अर्थात नेत्र नहीं पके हैं एवं कच्चे हैं ऐसा समझना चाहिए। साम अवस्था में अञ्जन, भारी भोजन, स्नान, घृतपान काढा आदि वर्जनीय हैं

निराम नेत्रों के लक्षण—

अगर नेत्रों में वेदना कम हो, खुजली चलती हो, परन्तु कम हो सूजन घटी हो आंसू कम आते हों और वर्ण या रङ्ग निर्मल हो, तो निरामता समझो, यानी नेत्रों को आम रहित पक्के समझो। इस अवस्था में अञ्जन, भारी भोजन, घृतपान, स्नान तथा काढा आदि के पीने में कोई मनाही नहीं है, यदि साम अवस्थामें ये कर लिए जावें तो हानिकी संभावना होजाती है

* नेत्र रोग चिकित्सा *

निम्न लिखित उपचारों से नेत्र रोगों की चिकित्सा की जाती है।

सेक—पानी आदि की बारीक धार नेत्रों में डालना।

आश्चोतन—पोटली या पिचकारी आदि से आंखों में दवा डालना।

पिण्डी—नेत्रों के ऊपर लुपरी आदि बांधना।

विडालक—नाफरा बचा कर आंखों के चारों ओर लेप करना।

तर्पण—आंखों में घी या गर्म पानी भरना।

पुटपाक—पकाया हुआ रस आंखों में भरना।

अञ्जन—दोप पकने के बाद आंखों में अञ्जन डालना।

सेक बिधि—

रोगी की आंखें बन्द करा कर उन पर चार अंगुल ऊंचे से घी आदि की धार बांधनी चाहिए इसी को सेक कहते हैं।

आश्चोत्तन विधि—

रोगी की आंखों को दो अंगुलियों से खोल कर उनमें काढ़े या शहद अथवा घी, दूध, आदि की बून्दें ड्रोपर (पिचकारी) द्वारा डालने को आश्चोचन कहते हैं।

पिण्डी विधि—

नीम की पत्ती मेथी आदि चीजों को घोट कर टिकियां बना कर आंख पर बांधने को पिण्डी कहते हैं।

बिडालक विधि—

अफीम, रसौंत, हल्दी आदि वस्तुवों को पीस कर आंक्रण बचाकर आंखों के चारों ओर लेप करने को बिडालक कहते हैं।

तर्पण विधि—

आंखों के चारों ओर उड़द आदि के चून की बाट करके आंखों को मिचवा कर उनमें घी, शहद आदि को भरदें और बाद में धीरे २ आंखों को खोलें इसे तर्पण कहते हैं।

पुट पाक विधि—

कमल नाल आदि को शिलापर पीस कर उसकी लुगदी का गोला बनालें इस गोले के चारों ओर मिट्टी लपेट कर आग में देदें जब गोला लाल हो जावे तब निकाल कर लुगदी को नीचोड़ कर इसका रस आंख में डालें इसी को पुटपाक कहते हैं।

अञ्जन विधि—

गोली, रस और चूर्णादि भेद से अञ्जन तीन प्रकार का है। थके हुए बहुत रोने के बाद डरे हुए, शराब पीए हुए, ज्वर रोगी एवं जिसके मल मूत्र आदि रुके हुए हों उनको अञ्जन नहीं लगाना चाहिए।

नेत्र रोगों पर पुनर्नवा (साटा)

पुनर्नवा की जड़ को दूध में पिस कर लगाने से आंखों की खुजली चली जाती है।
शहद में पीस कर आंजने से पानी बहना रुक जाता है।
घी में पीस कर आंजने से फूला नाश हो जाता है।
तैल में पीस कर आंजने से तिमिर या जाला ठीक होता है।
कांजी में पीस कर आंजने से रातोंधा ठीक होता है। इस दवा को देशी ममीरा कहते हैं। इसके समकक्ष नेत्र रोग नाशक दूसरी दवा कम ही नजर आती है।

नेत्राभिष्यन्द चिकित्सा—

फिटकरी फूला १ माशा, सेंधा नमक १ माशा, रसौंत ६ माशा इनको एक पाव गुलाब जल में मिला कर आंखों में डालने से सब प्रकार की दुःखनी आंखें ठीक हो जाती हैं।

गुवार पाठे का गुदा ४ तोले, अफीम २ माशे और फिटकरी २ माशे सब की पोटली बना कर दिन रात कई बार आंखों पर फेरने से नेत्र रोग आराम हो जाते हैं।

रतोंधी चिकित्सा—

सफेद साटे की जड़ पीपल और अरीठे की गुठली गोबर के रस में पीस कर नेत्र में डालने से रतोंधा चला जाता है।

मोतिया विन्द (लिङ्ग नाश) चिकित्सा—

नोसादर को महीन पीस कर बारीक से बारीक कपड़े से छान कर आंखों में लगाने से मोतिया बिन्द चला जाता है।

लड़के वाली औरत के दूध में भीमसेनी कपूर रगड़ कर लगाने से भी मोतिया बिन्द चला जाता है। कोकीन से आंखों को सुन्न करके काले और सफेद भाग की संधि में शस्त्र से छिद्र करके ताम्र यंत्र से गुंवार की दाल के शकल की मोतिया बिंद की टिकीया निकाल ली जाती है। बाद में ७ दिन तक साधारण आंख पर पट्टी बांधनी चाहिये। रोगी को इधर उधर हिलने न दें और पथ्य में केवल दूध और दलिया देना चाहिए।

नेत्र खुजली नाशक रोग—

यशद को और पीपल को घिसाकर आंख में डालने से नेत्रों की खुजली एवं जलन शान्त होती है।

शुक्र (फूला) चिकित्सा—

लाहोरी नमक १ माशा कबूतर की बीठ १ माशा आक की जड़ १ माशा, मूर्गी की बीठ १ माशा को निम्बू के रस या गो मुत्र में पीस कर आंखों में लगाने से फूला, जाला, तथा मोतिया बिन्द चला जाता है।

सर्व नेत्र रोग नाशक चिकित्सा

हरड़ बड़ी, बहेड़ा, आंवला, इनको समान भाग लेकर रात को पानी में भिगोदें, सुबह इस पानी से आंख धोने से समस्त नेत्र रोग शान्त होते हैं।

भोजन के बाद हाथ मलकर आंखों पर लगाने से नेत्र रोग कम होते हैं।

रसौंत को बकरी या स्त्री के दूध में घिस कर लगाने से समस्त नेत्र रोग चले जाते हैं।

गुलाबजल एक पाव में १ माशा एकी फलीवन मिला कर आंखों में डालने से समस्त नेत्र रोग तथा उनके घाव नासूर आदि ठीक होते हैं।

कपूर को बड़के दूध में पीस कर लगाने से उभरा हुआ फूला नष्ट होजाता है।

काला सुरमा १ छटांक को मृत काले सांप के मुंह में भर कर एक महीने तक रक्खें, उसके बाद नीम के वृक्ष के कोटरे में एक महीने रख कर, सौंफ, अजवायन, गुलाब जल, नीम की पत्तियों के रस, इनमें सात २ बार भावितकर, १ माशा मोती की गुलाब जल में पिष्टी करके मिलादें, तथा एक माशा उसमें ममीरा मिलादें, इस सुरमे के लगाने से नेत्रों की ज्योति बढ़ती है तथा नेत्रों के समस्त रोग शान्त हो जाते हैं।

पैरों को धोकर साफ रखने से नेत्रों की ज्योती बढ़ती हैं, कारण कि पैरों तथा नेत्रों का एक शिरा द्वारा सम्बन्ध है।

आंखों के लिए पथ्य—

चावल, मूंग, जौ, बथुवा, चौलाई, परवल, करेले, बेंगन, आदि घी में पका कर खाने चाहियें। मधुर तथा कड़वे रस भी हितकर हैं।

मन को एकाग्र करके पांव धोना, आंखों में त्रिफला जल का छींटा मारना, पैरों में तेल लगाना, हरियाली देखना, पानी में डूबकी लगाकर नेत्र खोलना, जूते पहनना, स्त्री का दूध आंखों में लगाना आदि पथ्य हैं।

अपथ्य—

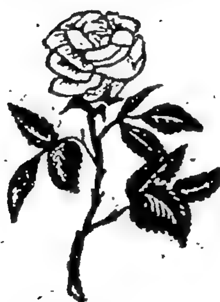
चरपरे, खारी, खट्टे, तीक्ष्ण और गर्म पदार्थ, उड़द, लोबिया, मैथुन, शराब, सूखा मांस, रवल मछली, अंकुर वाले अनाज और जलन करने वाले खाने पीने के पदार्थ क्रोध, शोक, रोना, मलमूत्रादि वेग रोकना, दन्तुन करना, नहाना, रात में भोजन करना, धूप में फिरना, धुवां में रहना, बहुत थकना, बारम्बार पानी पीना, महुवा, दही पत्तों के साग, तरबूज, मांस और पान नेत्र रोगियों के लिए हानि कारक हैं।

नेत्राञ्जन—

सोंठ, मिर्च, पीपल, करञ्ज की मिंगी, हल्दी, दारू हल्दी, सैन्धानमक, बिल्व मूल, वरुण छाल, जल अंगरा नोशादर, समुद्र झाग, इनका महीन अञ्जन बना कर आंख में डालने से अर्जुन शुक्र (फूला) पटलगत दोष, तिमिर (जाला) मोतिया बिन्द आदि रोग चले जाते हैं। तथा आंखों की ज्योती बढ़ती है तथा आंखें कभी खराब नहीं होती हैं। भोजन के बाद हाथों को धोकर परस्पर में मल कर यदि आंखों पर लगाए जायें तो आंखों सम्बन्धी रोग नहीं होते हैं।

नेत्रों पर त्रिफला प्रयोग—

हरड़ बड़ी, बहेड़ा, आंवला इनका समान भाग लेकर चूर्ण बना ले इस चूर्ण को रात में सोते समय ६ माशा दूध के साथ लेने से आंखें ठीक होती हैं। तथा त्रिफला के पानी से आंखें धोने से आराम होता है। एवं त्रिफला से सिद्ध किया हुआ घी खाने से आखों में पूर्ण आराम होता है तथा त्रिफला चूर्ण शहद में मिला कर खाने से भी श्रेयकर है।



* पञ्चम अध्याय *

मस्तिष्क की साधारण रचना।

मस्तिष्क को देखने के लिए सब से पहिले हम त्वचा को काटेंगे और उसके बाद सौत्रिक तन्तु से निर्मित कला और कला के नीचे पेशी तथा उसकी कंडरा और उसके बाद पारिकपालिका नाम की पतली कला काटने के बाद कपाल की हड्डी को काटेंगे। और उसके बाद बाह्य आवरण, मध्य आवरण, तथा अन्तः आवरण को हटाने के बाद मस्तिष्क दिखाई देगा। नवजात बालक के मस्तिष्क का भार ७ छटांक के लगभग होता है। पहिले वर्ष के अन्त में दुगना होजाता है। छठे वर्ष में तिगुना तथा १८ वर्ष के बाद ५२ छटांक भार हो जाता है। बाहर से मस्तिष्क का रङ्ग धूसर होता है जिस प्रकार हल चलाने से खेत में नालियां तथा मेंड़े बन जाती हैं इसी प्रकार मस्तिष्क में खाइयां और चक्रांग होते हैं, गहरे भाग को खाई या सीता कहते हैं। और उभरे हुए भाग को चक्रांग कहते हैं, । जिसके ये खाइयां गहरी होती हैं वह बुद्धिमान होता है तथा कम होती हैं वह पागल या मूर्ख होता है। यदि ऊपर से देखें तो वह मस्तिष्क के बीचो बीच एक दरार पड़ी हुई होती है इससे मस्तिष्क के बांए तथा दांये दो भाग होजाते हैं, इस दरार को जोड़ती हुई बीच

में एक सफेद चीज होती है इसको महा संयोजक कहते हैं। इसमें तीन शिरे या ध्रुव होते हैं ललाट ध्रुव, शंख ध्रुव, तथा पश्चात ध्रुव।

जिस प्रकार एक राज्य में तरह २ के महकमें होते हैं और उनके अलग २ कार्य होते हैं। तथा वे सम्पूर्ण राज्य का संचालन करते हैं उसी प्रकार मस्तिष्क में भी अलग २ केन्द्र होते हैं। जैसे गति केन्द्र, बुद्धि केन्द्र, ज्ञान केन्द्र, विद्या केन्द्र, दृष्टि केन्द्र, श्रवण केन्द्र, घ्राण केन्द्र आदि इन केन्द्रों का भी नामों के अनुसार अलग अलग कार्य हैं। इन केन्द्रों में शरीर से भिन्न २ स्थानों से तार आते हैं और विशेष २ केन्द्रों से शरीर को तार जाते हैं। इससे यह ही सिद्ध होता है कि मस्तिष्क हमारे शरीर का राजा हैं, वृहद मस्तिष्क के नीचे लघु मस्तिष्क रहता है, और लघु मस्तिष्क से सुषुम्नाका आरम्भ होती है।

यह शरीर का प्रधान अंग होने से यदि इसमें किसी प्रकार की कमी आती है तो इससे पागल पन, मृगी, मूर्च्छा, आदि रोग होकर शरीर बेकाम हो जाता है। और अन्य अंग श्रेष्ट तथा काम नहीं करते हैं। अतः मध्यम अंग की हमें सब तरह से रक्षा (हिफाजत) करनी चाहिये।

* शिरो रोग वर्णन *

शिर में निम्नलिखित ११ रोग होते हैं—

वातज, पित्तज, कफज, सन्निपातज, रक्तज, क्षयज, कृमिज, सूर्यावर्त, अनन्त वात, शंखक, अर्धावभेदक,

वातिक शिरो रोग के लक्षण—

जिसमें बिना कारण से अकस्मात शिर में पीड़ा हो और रात को ठण्ड में अधिक बढ़े, शिर बांधने तथा तपाने से शांत हो तो वातिक शिरो रोग होता है।

पैतिक शिरो रोग लक्षण—

शिर में पीड़ा तथा जलन हो जैसे किसी ने अङ्गारे रक्खे आंख और नाक में मानों धुवां निकलता हो ऐसा प्रतीत होता है रात्रि में ठण्ड के कारण शांत हो जावे तो पैतिक शिरो रोग होता है।

श्लेष्मिक शिरो रोग लक्षण—

शिर में पीड़ा तथा कफ से भरा हुआ भारी बोझदार जकड़ा हुआ और ठण्डा हो, आंख और मुंह में सूजन हो तो कफज शिरो रोग होता है।

सन्निपातिक शिरो रोग के लक्षण—

तीनों दोषों से उत्पन्न शिरो रोगमें तीनों दोषों के पूरे २ लक्षण होते हैं।

रक्तज शिरो रोग के लक्षण—

रक्तज शिरो रोग में पित्तज शिरो रोग के समान ही लक्षण होते हैं केवल भेद इतना ही होता है कि छूने पर बड़ी तकलीफ होती है।

क्षयज शिरो रोग के लक्षण—

जब शिर खून बसा कफ मेद मज्जा शुक्र और वायु से खाली हो जाता है। उस समय शिर में बड़ी तेज पीड़ा होती है। इसमें पसीना, धूम, नस्य, वमन आदि कराने से पीड़ा अधिक होती है। एवं रक्त आदि के निकलवाने से भी पीड़ा बढ़ती है। इसे क्षयज शिरो रोग कहते हैं।

क्रिमिज शिरो रोग के लक्षण—

क्रिमिज शिरो रोग में कीड़े पड़ने से रक्त आदि धातुओं को चाट जाते हैं, जिससे शिर में सुई चुभने जैसी पीड़ा होती है और नाड़ें फड़कती हुई नजर आती हैं तथा नाक से पीव और पानी के साथ कीड़े निकलते रहते हैं। यह क्रिमिज शिरो रोग में होता है।

सूर्यावर्त रोग के लक्षण—

सूरज उदय हो कर जैसे २ चढ़ता जाता है वैसे २ ही शिर, आंख, भुवों में पीड़ा बढ़ती जाती है। जब सूर्य मध्य में

आताहै तब पीड़ा तीव्र होती जातीहैऔर सूरज ढलते समय कम होती जाती है। एवं छिपने पर एक दम शांत हो जाती है अर्थात् पीड़ा रहती ही नहीं है, यह सन्निपातज है। और बड़ा कष्ट दायक है।

अनन्त वात रोग के लक्षण—

तीनों दोष कुपित होकर गर्दन की शिरा तथा गर्दन के पृष्ठ भाग में आंख और भौं तथा शङ्ख देश में हर समय बड़ी पीड़ा होती है। कपल में एक जगह पीड़ा होती है तथा जबड़ा बैठ जाता है और आंखोंमें विविध रोग हो जाते हैं इसे अनन्त वात कहते हैं हिन्दी में इसे कमल वायु कहते हैं।

(आंधा शीशी) अर्धावभेदक के लक्षण (हेमिक्रेनियां)

रुक्ष भोजन, अति भोजन, भोजन पर भोजन करने से पूर्व की वायु सेवन करने से, अधिक ओसका सेवन, परिश्रम, मैथुन, टट्टी, पेशाब का रोकना, कसरत करना आदि कारणों से बढ़ा हुआ वायु कफ के साथ या अकेला आधा मस्तक एक तरफ की कनपटी, आंख, ललाट में शस्त्र से काटने और आग से जलने या मथने, घिसने जैसी बड़ी तेज पीड़ा कर देता है। यदि इस रोग की लापरवाही से ठीक चिकित्सा न की जावे तो यह बहुत बढ़ कर एक आंख या कान खराब कर देता है। अर्थात् आंख से दीखता नहीं एवं कान से सुनता नहीं है। इसे अर्धाव भेदक या आंधा शीशी या अवकपकारी कहते हैं।

शंखक के लक्षण—

कुपित वात पित्त, कफ तथा रक्त शङ्ख देश में इकट्ठे हो कर एक बड़ा ही भयङ्कर शोथ पैदा कर देते हैं। जो कि लाल होता है। और पीड़ा एवं जलन होती है यह शोथ विष के समान फैल कर शिर और गले को रोक देता है और तीन दिनों में ही मार डालता है। यदि बड़ी निपुणता के साथ अनुभवी चिकित्सक चिकित्सा करे तो शायद भाग्य वाला ही रोगी इससे बच सकता है परन्तु वैद्य पहिले यह साफ कहदे कि यह रोगी असाध्य है प्रयत्न किया जा रहा है यदि भाग्य हुआ तो बच सकता है ऐसा कह कर ही इलाज करना चाहिए। अन्यथा वैद्य अपयश का भागी होता है।

वातज शिरोरोग चिकित्सा—

वातज शिरोरोग में दशमूल आदि वात नाशक औषधियों से पकाया हुआ दूध शिर पर सींचना चाहिये। रात के समय मूंग, उड़द और कुलत्थी को घी में भून कर और मिर्च आदि तीक्ष्ण वस्तु मिला कर खाना चाहिये। इसमें स्नेहन स्वेदन और मस्तक में तेल आदि मलना हितकारी है। एवं गर्म दूध पीना चाहिए कूठ, एरण्ड की जड़ सोंठ इनको समान भाग लेकर छाछ में पीस कर शिर पर लेप करने से वातज शिरो रोग ठीक हो जाता है।

पित्तज शिरोरोग चिकित्सा—

पित्तज शिरोरोग में रोगी को घृत आदि से स्निग्ध करके निशोथ ३ माशा गर्म पानी या दूध के साथ देना चाहिये। जिससे विरेचन हो जावें, और विरेचन से शिर का दर्द शान्त होजावे। शिर को बार २ ठण्डे पानी में डबोने से या सफेद चंदन को गुलाब जल में रगड़ कर लगाने से या गुलाब जल की पट्टी लगाने से पित्तज शिरोरोग शान्त होता है। आंवलों को पानी में पीस कर लेप करने से भी पित्तज शिर दर्द चला जाता है। इसमें शीतल पदार्थों का लेप तथा सींचन हितकर है।

कफज शिरोरोग चिकित्सा—

कफज शिरोरोग में लंघन कराना चाहिये तथा कायफल का नस्य देना चाहिए। रूखी, गर्म और पाचन औषधियोंका लेप और स्वेद देना चाहिये, गर्म जल पीना, गर्म पानी से नहाना पसीने निकल जाना, चाए पीना, केशर या सोंठ, मिर्च काली, पिप्पल का लेप करना, गर्म भुने हुए मूंग या अजवायन सूंघना ये सब कफज शिरोरोग में लाभदायक हैं, तेल मालिश इसमें बड़ी हानिकारक है।

रक्तज शिरोरोग चिकित्सा—

इसमें भोजन लेप सींचन आदि सब पित्तज शिरोरोग के समान करने चाहिये।

इसमें रक्तमोक्षण अर्थात फस्त खुलाने की बड़ी आवश्यकता है। एक बार शीतल तथा एक बार गर्म क्रिया करनी चाहिये। अमृतधारा या मक्खन में कपूर पीपरमेन्ट एवं अजवायन के फूल मिलाकर शिर में मलने से रक्तज शिरोरोग चला जाता है।

त्रिदोषज शिरोरोग चिकित्सा—

दशमूल से सिद्ध किया हुआ दूध पीने से या नस्य लेने से सोंठ और गुड़ को एक साथ सूंघने से त्रिदोषज शिरोरोग ठीक हो जाता है।

कृमिज शिरो रोग की चिकित्सा

रीठे को पानी में पीस कर दो चार बूंद नाक में टपकाने से शिर के एवं माथे के कीड़े मर जाते हैं।

बिडङ्ग के चूर्ण को चिलम में डाल कर तमाखू की तरह पीने से कीड़े मरजाते हैं।

सूर्यावर्त चिकित्सा—

घी और गुड़ को मिला कर पीने या नस्य लेने से घेवर या जलेबी, एवं पूड़े दूध में खाने से, फस्त खुलाने से एरण्ड के तैल का विरेचन लेने से या घी और दूध मिला कर पीने से सूर्यावर्त रोग ठीक होता है।

धनियां, लाल चन्दन, कासनी और इसबगोल इन सब को पोस्त के पानी में पीस कर लेप करने से सूर्यावर्त चला जाता

है। नाक के द्वारा दूध या पानी पीना इस रोग में अत्यन्त ही लाभकारी है।

अर्धात्र भेदक चिकित्सा—

स्नेहन, स्वेदन, विरेचन, धूप और स्निग्ध तथा गर्म भोजन से अर्धात्र भेदक या आंधा शीशीका दर्द शांत होता है।

वाय विडङ्ग और काले तिल बराबर २ लेकर दूध में पीस कर लेप करने से और इसी का नस्य लेने से अर्धावभेदक शांत हो जाता है।

इस में नाक के द्वारा दूध पानी या नारियल का पानी पीना अत्यन्त ही लाभदायक है।

केशर को घी में भून कर और बराबर की मिश्री मिला कर बकरी के दूध में पीने से अर्धाव भेदक शांत हो जाता है। इसी की नस्य लेने से भी तुरन्त फायदा होता है।

शंखक शिरोरोग चिकित्सा—

शंखक की चिकित्सा सूर्यावर्त की तरह ही होती है केवल स्वेदन कर्म इसमें वर्जनीय है।

अनन्त वात चिकित्सा—

अनन्त वात में भी सूर्यावर्त के समान ही चिकित्सा लाभदायक है। इसमें खून निकलवाना या फस्त खोलना हितकर है शहद मिले रसगुले, घेवर, मलेवी आदि का दूध के साथ सेवन करना हितकर है।

सब तरह के शिर दर्द में विरेचन लेना आवश्यक है। मुलेठी २ तोले, सुनाय १ तोला, सौंफ ६ माशा, शुद्धगन्धक ६ माशा, मिश्री ६ तोला, इनका चूर्णकपड़छान करके ६ माशा दूधके साथ लेने से कब्ज मिट जाता है। और कब्ज मिटने से शिर में शान्ति हो जाती है। कपूर ६ माशा, दालचिनी तैल १ तोला पीपरमेन्ट २ माशा वेसलीन २ तोला इनकी वाम लगाने या एस्प्रीन ४ रत्ती पानी के साथ लेने से शिर दर्द चला जाता है।

मस्तिष्क तथा वात नाड़ियों का एक दूसरे से परस्पर सम्बन्ध है रज और तम दोषों के द्वारा मन बिगड़ने से मस्तिष्क में खराबी होजाती है जिससे उन्माद, मूर्च्छा, अपस्मार, सन्यास महात्यम आदि रोगों की उत्पत्ति हो जाती है एवं वेदना वाहक वात नाड़ियों का मस्तिष्क से सम्बन्ध विच्छेद होने से पक्षाघात (लकवा) हो जाता है उपरोक्त रोगों का शिर से सम्बन्ध होने से इनका भी यथा योग्य निदान लक्षण चिकित्सा सहित संक्षेप से विवेचन किया जावेगा। इसी प्रकार मस्तिष्क तथा मन पर बुरा प्रभाव पड़ने से मनुष्य अकस्मात नपुंसक हो जाता है अतः नपुंसकता के भी निदान लक्षण तथा चिकित्सा का वर्णन करना आवश्यक है। नपुंसकता की चिकित्सा के लिए वाजीकरण तथा रसायन का लिखना भी जरूरी है। अतः इन सब का संक्षेप से वर्णन आगे किया जा रहा है।

* षष्ठम-अध्याय *

उन्माद रोग वर्णन ।

उन्माद के कारण ।

संयोग विरुद्ध, अपवित्र, विष मिला हुआ भोजन करने से पूज्य देवता और गुरु का अपमान करने से अत्यन्त दुःखी या प्रसन्न होने से बलवान के साथ युद्ध करने से या भय से, वात, पित, कफ, सन्निपात मनोज दुःख और विष के भेद से छः प्रकार का उन्माद हो जाता है ।

उन्माद की सम्प्राप्ति—

काम, शोक, भय, लोभ, क्रोध आदि कारणों से मन के रज और तम दोष बिगड़ कर मन को दूषित करते हैं मन के ऊपर कुप्रभाव पड़ने से शारीरिक वात, पित, कफ आदि दोष बिगड़ जाते हैं। और वे ज्ञान वाहक नाड़ियों एवं दिल तथा मस्तिष्क पर अपना प्रभाव डालते हैं उसी में उन्माद रोग उत्पन्न हो जाता है ।

उन्माद के सामान्य लक्षण—

बुद्धि भ्रम मनकी चञ्चलता दृष्टि का इधर उधर घूमाना अधीरता, असम्बद्ध भाषण, एवं ज्ञान शून्यता आदि कारणों से यह रोगी पहचाना जाता है ।

वातज उन्माद के लक्षण—

रुक्ष शीतल और अल्प भोजन करने से उपवास से अधिक वमन या विरेचन से या धातु के क्षीण होने से वायु कुपित होकर वातज उन्माद कर देता है। इसमें रोगी बिना कारण के हंसता, नाचता, गाता है तथा रोता है। हाथ पैरों का पटकना, अधिक बोलना, आदि कारणों एवं रोगी का शरीर रुखा दुबला और लाल होने से तथा भोजन पचने के बाद इस का दौरा होने से वातिक उन्माद समझना चाहिये।

पित्तज उन्माद के लक्षण—

गर्म कच्चे कड़वे कट्टे तथा जलन कारक पदार्थ खाने से पित्त बढ़ कर उन्माद पैदा कर देता है, इसमें क्रोध आना लज्जा और मनुष्यता को छोड़ कर नंगा होना, सहनशील न होना, शरीर गर्म रहना, डर कर भागना, ठंडी वस्तुओं को अधिक चाहना चेहरा पीला होना आदि लक्षण होते हैं।

कफज उन्माद के लक्षण—

कम भूख में पेट भर खाना, परिश्रम न करना, आदि कारणों से कफ बढ़ कर कफज उन्माद करता है इसमें रोगी एकान्त में रहना पसन्द करता है, कम बोलता है। स्त्रियों को अधिक चाहता है, नींद अधिक आती है, भोजन में इच्छा नहीं रहती, कभी २ उल्टी आती है, या जी मचलता है, मुंह से लार पड़ती हैं भोजन करते ही उन्माद का जोर बढ़ता है तथा नाखून चमड़ा मल मूत्र तथा आंखों का रङ्ग सफेद होजाता है।

सन्निपातज उन्माद के लक्षण—

इस में सब दोषों के मिले हुए कारण तथा लक्षण होते हैं, यह उन्माद बड़ा ही भयङ्कर तथा दुश्चिकित्स्य है।

शोकज उन्माद के लक्षण—

चोर, शत्रु, राज पुरुष, राजा, सिंह, व्याघ्र या सर्प आदि से डरना, धन, पुत्र, स्त्री या स्वजन के नष्ट होने से, यथेच्छ स्त्री के न मिलने से मनुष्य के दिल में अत्यन्त दुःख हो कर शोकज उन्माद हो जाता है। इसमें मनुष्य गुप्त बातों को कहता है। तरह २ की बातें करता है, हंसता है, गाता है, और रोता है। और अत्यन्त ही मूर्ख हो जाता है।

विष जन्य उन्माद के लक्षण—

जहर खाने से जो उन्माद होता है उसमें रोगी की आंखें लाल हो जाती हैं तथा बल और वर्ण का नाश होना, इन्द्रियों की शक्ति का नाश होना, मुंह या शरीर का रङ्ग काला पड़ना बेहोश होना आदि लक्षण हो जाते हैं।

असाध्य उन्माद के लक्षण—

रोगीका मुंह सीदा नीचेकी या ऊपर की ओर रहना मांस और बलका क्षीण होजाना, नींद न आना आदि कारणों से रोगी को असाध्य जानना चाहिए।

भूतोन्माद के लक्षण—

भूतोन्माद में बोल चाल पराक्रम शक्ति उठना, बैठना, चलना, दौड़ना, पकड़ना, कूदना, लांघना, ज्ञान विज्ञान, कारीगरी आदि ऐसे विचित्र होते हैं। जिनको सामान्य आदमी नहीं कर सकता तथा इसका समय निश्चित नहीं होता है।

देव जुष्ट उन्माद के लक्षण—

इसमें मनुष्य संतुष्ट तथा पवित्र रहता है सुगन्धित माला धारण करना, तन्द्रा रहित रहना, लगातार संस्कृत बोलना, तेज युक्त दूसरों को वर देना, नेत्रों का स्थिर रहना, ब्राह्मणों का भक्त होना आदि लक्षण देव जुष्ट के हैं। जिनको क्रोध हो शरीर के अव यव ढ़ीले पड़ जावें, मुंह से लार या भाग पड़ते हों, नींद अधिक आति हो, शरीरमें कम्प कपी रहना, गूंगासा बना रहना, आदि लक्षण गण माता के कोप से जो उन्माद होता है उसमें होता है।

राक्षस ग्रह ग्रहीत उन्माद के लक्षण—

इसमें पसीना अधिक आना ब्राह्मण गुरू देवता आदि की निन्दा करना, टेढी नजर रखना, निडर रहना, कुमार्ग में दृष्टि रखना, उचित खान पान से सन्तुष्ट न होना आदि लक्षण होते हैं।

गन्धर्व ग्रह गृहीत उन्माद के लक्षण—

इसमें प्रसन्न चित्त नदी के तट पर घूमना, सदाचार युक्त

रहना, गाना, नाचना, हंसना आदि में रुचि रखना सुगन्धित पुष्प या मालाओं से प्रेम रखना आदि लक्षण होते हैं।

यक्ष ग्रह गृहीत उन्माद के लक्षण—

इसमें आंखों का लाल रहना, महीन लाल वस्त्र धारण करना, जल्दी चलना, गम्भीर सहिष्णु तथा थोड़ा बोलना, एवं दाता सब में प्रेम रखना आदि लक्षण होते हैं।

सर्प ग्रह गृहीत उन्माद के लक्षण—

इसमें रोगी सर्प की तरह पृथ्वी पर पेट के बल चलता है जीभ से ओष्ट के अगल बगल शिरे को चाटता है, क्रोधित रहना गुड़, शहद, दूध आदि को चाहना आदि लक्षण होते हैं।

पितृ ग्रह गृहीत उन्माद के लक्षण—

इसमें रोगी डाभ की शायरियों पर पित्तरों को अपसव्य होकर पिण्ड दान करता है, मांस तिल गुड़ आदि की खीर चाहता है, तथा पित्तरों का भक्त होता है।

पिशाच ग्रह गृहीत उन्माद के लक्षण—

इसमें ऊपर को हाथ उठाए रहना, नंगा रहना, कृप होना, ऊट पटांग बकना, शरीर से दुर्गन्ध आना, अधिक खाना, रात्री में जंगल आदि में घूमना, रोना आदि लक्षण होते हैं।

ग्रह गृहीत उन्माद के असाध्य लक्षण—

मह तीन प्रयोजन से लगते हैं। खेलने के लिए, पूजाने के

लिए, और मारने के लिए। इनमें मारने के लिए जो लगते हैं वे असाध्य होते हैं, अर्थात बिना मारे नहीं छोड़ते, उनके लक्षण निम्न प्रकार से हैं। आंख फाड़ २ कर देखे, जल्दी चले, मुंह से झाग निकलें उन्हें चाट जावे, अधिक सोवे, गिर २ कर पड़े, कांपे, पर्वत हाथी पेड़ मकान आदि से गिरने पर जो पागल हो जावे तो असाध्य होता है। यदि तेरह वर्ष तक लगातार जो मनुष्य पागल रहता है वह भी असाध्य होता है।

देव आदि ग्रहों के लगने का समय—

देव ग्रह पूर्णिमा को लगते हैं, असुर सन्ध्या के समय, गन्धर्व अष्टमी को, यक्ष ग्रह प्रतिपदा को, पित्तर अमावस्या को सर्प पञ्चमी को, राक्षस रात्री को, तथा पिशाच ग्रह चतुर्दशी को लगते हैं।

प्रश्न यह उठता है कि यदि देवादिकों के लगने से उन्माद होता है तो फिर लगते समय वे क्यों नहीं दिखाई पड़ते ? उत्तर यह है कि जैसे शीशा में आदमी का प्रतिबिम्ब शरीर में सर्दी, गर्मी का प्रवेश सूर्य कान्त मणि में सूर्य किरणों का प्रवेश और शरीर में आत्मा का प्रवेश होते समय नहीं जान पड़ता, उसी प्रकार देवादि ग्रह भी मनुष्य के शरीर में प्रवेश करते समय नहीं देख पड़ते, किन्तु शरीर में घुस कर तुरन्त ही कष्ट देते हैं। उन्हीं कष्टों से देवादिकों का लगना माना जाता है।

स्पष्ट वक्तव्य—

देवादि ग्रह प्रायः पवित्र होने से न तो वे मनुष्यों के

शरीर में प्रविष्ट होते हैं, और न लगते ही हैं वस्तुतः इन ग्रहों के जो खून, चर्बी, मांस खाने वाले भयंकर रात में घूमने वाले लाखों, करोड़ों नौकर (कीटाणु) हैं वे ही लगाते हैं।

उन्माद रोग में चिकित्सा क्रम—

वातज उन्माद में घृत आदि पिलाना, पित्तज उन्माद में निशोथ आदि का विरेचन देना तथा कफज उन्माद में मैन फल आदि से वमन कराना हितकर है। एनेमा या वस्ति लगाना भी इसमें अत्यन्त ही लाभ प्रद है। उन्माद रोगी को वृक्ष, अग्नि पर्वत जल आदि विषय स्थानों से बचाना चाहिए।

देव, पितृ और गन्धर्व' गृहीत उन्माद में तीक्ष्ण अञ्जन नस्य तथा क्रूर कर्म त्याग देने चाहिये। नींद न आने से प्रायः यह रोग बढ़ता है, अतः आरम्भ में यदि अफीम दे दिया जावे तो रोगी को नींद आजाती है। और रोग रुक जाता है शिर को घुटवाकर उसमें १ पाव बादाम रोगन में १ छटांक चन्दन का तैल डाल कर मालिश करवानी चाहिए। यदि उष्ण काल हो तो ३ या चार घण्टे तक रोगी को पानी के नल के नीचे भी बैठाना चाहिए।

विशेप प्रयोग—

ब्राह्मी स्वरस चार सेर कूठ, शंख पुष्पी, तथा वच, का कल्क समान भाग १ पाव और शुद्ध गाय का घृत एक सेर इन सबको एक लोह की कडाई में डालकर मंद २ अग्नी से पकावें

जब घृत बाकी बचे तब छान कर एक शीशी में भरलें। इस घृत को २॥ तोला सुवह तथा २॥ तोला शाम को एक पाव दूध में डालकर १॥ माशा सर्प गन्धा के चूर्ण को साथ में लेने से और उपरोक्त तैल मालिश करने से एवं रात के सोते समय २॥ तोला की मात्रा में *ब्रह्मरसायन* लेने से सब तरह के उन्माद शान्त हो जाते हैं।

कायफल वाकस्य तथा मनः शिला और हरताल का अंजन इसमें लाभप्रद है।

शोकज उन्माद में तीर्थाटन कथा वार्ता वीत राग साधुवों के दर्शन तथा वैराग्य सम्बन्धी बातों से लाभ होता है। धन के क्षीण होने से जो उन्माद होता है उसमें दान पुण्य की गाथाएं तथा धन वाणिज देखने से लाभ होजाता है शोक या हर्ष से अचानक चित्त भ्रम होने से जो उन्माद होता है उसमें पुलिश के कर्मचारियों द्वारा एकान्त में पिटवाना डराना या सर्प से कटवाना या अन्य भयोत्पादक कारणों से उन्माद शान्त हो जाता है।

एक छटांक शङ्ख पुष्पी के रस में १ तोला शहद तथा १ रत्ती स्वर्ण भस्म डाल कर २१ दिन पीने से उन्माद शर्तिया चला जाता है। पीपल, काली मिर्च, सेंधा नमक शहद तथा गोलोचन इन औषधियों को समान भाग लेकर महीन पीस कर अञ्जन के लगाने से भूत ग्रह आदि से पैदा हुआ तथा वातादि दोष जनित उन्माद शांत हो जाता है।

ग्रह दशा हर धूप—

नीम के पत्ते, वच, हींङ्ग, सांप की कांचली तथा सरसों इन औषधियों के द्वारा धूप देने से सब तरह के उन्माद शांत हो जाते हैं। इसमें महा कल्याण, महाचेतस महा पैशाचिक, घृत भी लाभ प्रद हैं जो कि चक्रदत्त में बताए गए हैं। इसमें उष्ण पदार्थ छोड़ कर घृत, दूध, मक्खन, गेहूँ, मूंग, चावल आदि सात्विक भोजन करना चाहिये। ब्राह्म रसायन तथा अंगुरासव का प्रयोग भी इसमें लाभ कारक है।

मूर्च्छा के कारण।

अधिक हर्ष तथा अधिक दुःख, क्रोध, दुर्बलता एवं मच्छी दूध आदि का विरुद्ध भोजन करना, टट्टी पेशाब का रोकना, चोट लगना, सतोगुण की कमी तथा तमोगुण की अधिकता आदि कारणों से दोष कुपित होकर जब इन्द्रिय वाही तथा मनोवाही स्रोतों को रोक लेते हैं तब मूर्च्छा होती है।

मूर्च्छा के सामान्य लक्षण—

इसमें मनुष्य अचानक अचेत होकर गिर पड़ता है, किसी प्रकार का ज्ञान नहीं रहता यथा हिलता डुलता नहीं और लकड़ी की तरह निश्चेष्ट पड़ा रहता है।

मूर्च्छा के भेद—

वात, पित्त, कफ, रक्त, शराब और विष के भेद से मूर्च्छा छः प्रकार की होती है।

मूर्च्छा के पूर्व रूप—

हृदय में पीड़ा उबासी मन में ग्लानी स्मृति का नाश आदि लक्षणों से पूर्व रूप जानना चाहिये।

वातज मूर्च्छा के लक्षण—

जिसमें नीला काला या लाल रङ्ग आकाश को देखते हुए मूर्च्छित होता है। और चेता जल्दी ही होजावे हृदय में पीड़ा धुजनी अंगड़ाई आदि हों तथा चेहरा काला या लाल हो जावे तो वायु की मूर्च्छा जानना चाहिये।

पित्तज मूर्च्छा के लक्षण—

जिसमें हरा, लाल, पीला, दिखाई पड़ते हुए मूर्च्छा हो तथा चहरे का रङ्ग भी पीला पड़ जावे और पसीने के साथ १ चेतनवा आवे, शरीर गर्म प्यासका लगना, पीली टट्टी का लगना, जलन होना आदि लक्षण हों तो पित्त की मूर्च्छा जानें।

कफज मूर्च्छा के लक्षण—

जिसमें आकाश को मेघों से घिरा हुआ देखते हुए मूर्च्छित हो जावे, और देरी से चेतनता आवे, मुंह में लार, जी मचलान आदि लक्षण हों तो कफ की मूर्च्छा जानना चाहिए।

सन्निपातिक मूर्च्छा के लक्षण—

इसमें तीनों दोषों के लक्षण मिलते हैं। और यह बड़ी भयङ्कर होती है।

रक्तज मूर्च्छा के लक्षण—

पृथ्वी और जल में तमोगुण होता है और पृथ्वी तथा जल का अंश रक्त में रहता है। अतः द्रव्य स्वभाव या रक्त से भी मूर्च्छा हो जाती है। अर्थात् रक्त बहता हुआ देख कर कमजोर हृदय वाले तमोगुणी मनुष्य बेहोश हो जाते हैं। इसमें शरीर अकड़ जाता है तथा आंखें खुली रहती हैं एवं श्वांस घुटता है।

मद्यज मूर्च्छा के लक्षण—

इसमें अण्ड वण्ड बकता हुआ पड़ा रहता है और किसी बात की स्मृति नहीं रहती है तथा जब तक मद्य का पाक नहीं होता, तब तक हाथ पैर पटकता हुआ पड़ा रहता है।

विषज मूर्च्छा के लक्षण—

इसमें शरीर कांपता है, प्यास लगती है, नींद आती है। और जैसा भी विष खाता है उसके लक्षण विशेष होते हैं।

भ्रम रोग के लक्षण—

चक्कर की तरह शरीर घूम कर पृथ्वीपर पड़जावे उसे भ्रम रोग या चक्कर आना कहते हैं।

निद्रा के लक्षण—

जब मन और ज्ञानेन्द्रियां थक कर अपने २ विषयों को ग्रहण नहीं करते तब मनुष्य सो जाता है।

तन्द्रा के लक्षण—

इन्द्रियां अपना काम न करें जंभाई आवे थकावट मालूम हो, सोने की सी ईच्छा हो उसे तन्द्रा कहते हैं।

क्लम के लक्षण—

जिसमें श्वास फूले नहीं और बिना परिश्रम के थकावट हो और शरीर भारी पड़जावे उसे क्लम कहते हैं।

मूर्च्छा, भ्रम, निद्रा, तन्द्रा के कारण भेद—

मूर्च्छा पित्त की प्रधानता से होती है भ्रम में रजोगुण पित्त तथा वायु प्रधान होते हैं। तमोगुण वात तथा कफ से तन्द्रा आती है और निद्रा में कफ प्रधान होता है।

निद्रा और तन्द्रा में भेद—

निद्रा में इन्द्रिय तथा मन को मोह होता है और तन्द्रा में इन्द्रिय मोह होता है।

मूर्च्छा और सन्यास में भेद—

मद और मूर्च्छा दोषों का वेग खतम होने पर स्वयं शान्त हो जाते हैं। परन्तु सन्यास बिना औषध के ठीक नहीं होता है।

सन्यास के लक्षण—

दोष अत्यन्त प्रबल होकर हृदय में स्थित हो शरीर वाणी मन और इन्द्रियों को वेकाम कर सतोगुण से हीन मनुष्य को वेहोश कर देते हैं। और मनुष्य मरे हुए के समान काठ की

तरह पृथ्वी पर पड़ जाता है। यदि समय पर चिकित्सा न की जावे तो मर भी जाता है।

मूर्च्छा की साधारण चिकित्सा–

यदि गर्मी के कारण या अन्य कारणों से अचानक मनुष्य मूर्च्छित हो जावे तो शीतल जल के छिड़के अवगाहन पंखे से हवा करना कायफल के चूर्ण का नाक में नस्य देना हुक्के का गुल तथा मनशिला लहसुन आदि से बनाया हुआ तीक्ष्ण अंजन आंखों में डालना आदि उपचार करने से मूर्च्छा भंग हो जाती है।

सन्यास में कौंच की फली शरीर में रगड़ना बाल नोंचना सुई चुभोना, लीड़ी लगाना, दांतों से काटना, अञ्जन आंखों में अञ्जना नस्य देना आदि साधनों से होश में लाना चाहिये।

विशेष योग—

एक माशा कपूर और छः माशा चन्दन सफेद गुलाब जल में घोट कर माथे या शरीर पर लेप करने से मूर्च्छा शान्त होती है। छोटी पीपल का चूर्ण १॥ माशा शहद में मिलाकर चटाने से या लोबान की धूनी देने से मूर्च्छा चली जाती है।

मद्यज विषज मूर्च्छा चिकित्सा—

मद्यज मूर्च्छा में मैनफल के द्वारा वमन कराकर मनुष्य को सुला देना चाहिये। तथा विषज मूर्च्छा में शिरीष के पुष्पोंका स्वरस चार चार रत्ती दो २ घन्टे बाद देना चाहिये।

भ्रम चिकित्सा—

दुरालभा का क्वाथ या त्रिफला चूर्ण ३ माशा रात को सोते समय दूध के साथ लेने से भ्रम रोग चला जाता है।

मूर्च्छा में पथ्य—

शीतल जल से छींटे देना, मणि या हार पहनाना, शीतल चन्दन आदि द्रव्यों का लेप करना, तिल तैल मलना, शीतल बहती हुई नदी या तालाब में स्नान करना, पंखे की हवा करना, सुगन्धित शीतल शर्बत पीना, फुंवारे वाले मकान में रहना, चन्द्रमा की शीतल किरणों का सेवन करना, अंजन लगाना, नस्य लेना, शिरावेध करना, डाम लगाना, सुई चुभोना, बाल उखाड़ना, नाखून दबाना, दान्तों से काटना, नाक और मुंह का श्वास रोकना, विरेचन देकर लंघन कराना, क्रोध कराना, डराना दुःख प्रद खाट पर सुलाना, रोगी के मन बहलाने वाली विचित्र २ कहानियां कहना, ऊंची आवाज से बोलना सुन्दर बाजे जोर से बजाना, रोगी की भूली हुई बातों को याद करना, आत्मज्ञान में लगाना, धीरज धराना, छाया, वर्षा का पानी, सौबार पानी में धोया हुवा घृत, कोमल और तीखे रस, खीलों का माण्ड पुराने जौ लाल चावल, हाण्डी घृत, मूंग और मटर का यूष, गाय का दूध, मिश्री, अनार, नारियल, चौलाई कुए का पानी, सफेद चन्दन, कपूर का पानी, नेत्र वाला, शीतल बालू, मक्खन, दाख आदि मूर्च्छा रोग में हित कर है और पथ्य हैं।

मूर्च्छा में अपथ्य—

टट्टी पेशाब आदि का रोकना, पान खाना, मेथी का शाक, धूप में फिरना, विरुद्ध अन्न पान करना, स्त्री प्रसङ्ग करना, चरपरे रस सेवन करना, पसीना लेना, प्यास, निद्रा आदि के वेग को रोकना, मठा या छाछ पीना, रात दिन बैठा रहना, अग्नि से तपना इच्छा के विरुद्ध कार्य करना, परिश्रम करना, चिन्ता करना, घोड़े की सवारी करना, दातुन करना आदि कारणों से मूर्च्छा अधिक होती है। और यह असाध्य है।

मदात्यय के कारण—

विष में जो लघु, रूक्ष, आशु, विशद, व्यवायी, तीक्ष्ण, विकाशी, सूक्ष्म, उष्ण, अव्यक्त रस यह दश गुण कहे गए हैं। वे मद्य (शराब) में भी रहते हैं। अतः यह मद्य यदि विधि पूर्वक सेवन न किया जावे तो इससे बड़ा भयङ्कर पागल पन हो जाता है उसी को मदात्यय कहते हैं।

मद्य (शराब)का स्वभाव—

इसका स्वभाव अन्न के समान है यदि यह युक्ति युक्त पिया जावे तो अमृत के समान है और अयुक्ति युक्त पिया जावे तो जहर से भी बढ़ कर है। जिस प्रकार प्राणियों के प्राण अन्न के आश्रित ही रहते हैं परन्तु वह भी अयुक्ति युक्त सेवन करने से विष के समान शरीर को नष्ट कर देता है। और विष जो है वह

प्राणों को नष्ट करने वाला है। परन्तु युक्ति युक्त सेवन करने से अमृत के समान गुण करने वाला तथा शक्ति दाता है, यह ही उक्ति मद्य के विषय में जानें।

विधि पूर्वक मद्य पान के गुण—

विधि पूर्वक समय पर उचित मात्रा से स्निग्ध पदार्थ तथा हित कर अन्न के साथ प्रसन्न होकर मद्य पीता है उसके वह अमृत के समान गुण कारक है और आयु शरीर तथा शक्ति को बढ़ा कर तेज कान्ति एवं वीर्य को बढ़ाता है।

प्रथम मद के लक्षण—

विधि पूर्वक मद्य सेवन से मदात्यय (नशा) जो होता है उनमें प्रथम मदात्यय के लक्षण इस प्रकार होते हैं। इसमें स्मरण शक्ति, बुद्धि आनन्द, गाने में रूचि, खान पान में वृद्धि, नींद आना, काम शक्ति की प्रबलता आदि लक्षण होते हैं यह प्रथम मद सुखकारी तथा आनन्द दायक होता है।

द्वितीय मद के लक्षण—

इसमें बुद्धि, स्मृति, वाणी आदि का नाश हो जाता है। मनुष्य पागल की तरह हो जाता है और आलस्य तथा नींद आती है यह द्वितीय मद मध्यम दर्जे का है।

तृतीय मद के लक्षण—

इसमें अगम्य वैश्या आदि से मैथुन करता है अपने बड़ों का अपमान करता है। अभक्ष्य पदार्थ खाता है तथा बेहोश हो

जाता है, और अपने दिल की गुप्त बातों को कहता है यह तृतीय मद के लक्षण हैं।

चतुर्थ मद के लक्षण—

इसमें मनुष्य एक दम पागल होकर कटे हुए वृक्ष की तरह बेसुध होकर गिर पड़ता है। उसके मुंह में मक्खियां भिन भनाती हैं तथा कुत्ते मुंह चाटते हैं मानों मुर्दा पड़ा हो ऐसी अवस्था उसकी हो जाती है और शरीर अकड़ जाता है, बेवकूफ, पागलों को छोड़कर शायद ही कोई बुद्धिमान ऐसा भयङ्कर मद्य का सेवन करता है। अर्थात कोई नहीं करता है।

जो मनुष्य बिना भोजन किए खाली पेट मद्य का सेवन करते हैं, उनके तरह २ की व्याधियां पैदा हो जाती हैं। तथा शरीर को नष्ट कर देती है।

विधि रहित मद्य सेवन से उपद्रव—

क्रोध, भय, प्यास, शोक, भूख, व्यायाम, भार, और मार्ग चलने से क्षीणता हो, टट्टी पेशाब की हाजत हो, अधिक खाने पीने से पेट फूला हो, अजीर्ण निर्बलता, गर्मी से व्याकुलता हो ऐसी अवस्था में मद्य पीने से चाहे भोजन के साथ ही क्यों न पिया गया हो आगे कहे जाने वाले पानात्यय आदि अनेक रोग पैदा हो जाते हैं।

मद्य के विकार—

पानात्यय, परमद, पानाजीर्ण, पानविभ्रम ये चार विक्रम मद्य के विशेष होते हैं।

वातिक मदात्यम के लक्षण—

इसमें हिचकी, श्वास, शिरका काम्पना, पसवाड़े में पीड़ा नींद का न आना, अधिक बड़बड़ाना आदि लक्षण होते हैं।

पैतिक मदात्यम के लक्षण—

इसमें प्यास लगना, जलन होना, ज्वर, पसीना आना, टट्टी लगना, चक्कर आना, शरीर का रङ्ग हरा होना आदि लक्षण होते हैं।

कफज मदात्यम के लक्षण—

इसमें वमन, अरुचि, जी मिचलाना, तन्द्रा शरीरका भारी होना, जाड़ा लगना, शरीर गीला रहना आदि लक्षण होते हैं।

सन्निपातिक मदात्यम के लक्षण—

इसमें सब दोषों के लक्षण एक साथ होते हैं।

परमद के लक्षण—

इसमें अरुचि होना, मुंहका जायका बिगड़ना, टट्टी, पेशाब का रुकना, मुंह से कफ आदि गिरना, शरीर भारी होना, तन्द्रा आना, प्यास लगना, शरीर में पीड़ा तथा सन्धियों में दर्द आदि लक्षण होते हैं।

पानाजीर्ण के लक्षण—

इसमें पेट का फूलना, वमन होना, जलन लगना, डकारें आना आदि लक्षण होते हैं।

पान विभ्रम के लक्षण—

इसमें शरीर तथा हृदय में सुई चुभने जैसी पीड़ा का होना, मुंह से कफका गिरना, कण्ठ में पीड़ा तथा धुवांना निकलना, मूर्च्छा, वमन, शिर पीड़ा, जलन होना किसी प्रकार के मद्य तथा भोजन में रुचि का न होना आदि लक्षण होते हैं।

मदात्यय के असाध्य लक्षण—

इसमें यदि ऊपर का होठ लटक जावे बाहर जाड़ा तथा शरीर के भीतर जलन जान पड़े, बिना तैल लगाए ही मुंह चिकना हो, जीभ, दन्त और होठ काले या नीले पड़ जावें आंखें पीली या लाल हो जावें तो असाध्य समझें ऐसी हालत में चिकित्सा नहीं करनी चाहिए।

मदात्यय रोग के उपद्रव—

इसमें हिचकी वमन ज्वर कम्पकपी पंसुली में दर्द खांसी चक्कर आना, आदि उपद्रव होते हैं।

मदात्यय का चिकित्सा क्रम—

मठा या छाछ पिलाने से मद्य का वेग उतर जाता है। पीटने या धमकाने से भी मद्य का वेग शीघ्र ही उतर जाता है। रात के समय ४ माशा त्रिफला का चूर्ण शहद के साथ तथा प्रातः काल अद्रक ३ माशा गुड़ के साथ खाने से और पथ्य पूर्वक रहने से सब प्रकार के मदात्यय चले जाते हैं। ठंडे जल में गोते लगाना तथा दूध पीना भी इसमें हितकर है।

मदात्यय नाशक योग—

थोड़ा घृत तथा चावलों के सत्तुवों में पिण्ड खजूर किशमिश, चांगेरी, इमली, अनार, फालसा तथा आंवला इन औषधियों के रस को डालकर घोल दें इसके पीने से मद्य (शराब) पान से होने वाले विविध प्रकार के विकार शान्त हो जाते हैं।

वातिक मदात्यय चिकित्सा—

सौचर नमक, सोंठ, काली मिर्च पीपल इनका समान भाग चूर्ण लेकर करके १ माशा जल मिश्रित मद्य में डाल कर पीने से वातिक मदात्यय शान्त हो जाते हैं।

पैतिक मदात्यय चिकित्सा—

इसमें शीतल क्रियाएं तथा मूंग के यूष में मिश्री डाल कर पिलाना चाहिये इस प्रकार करने से पैतिक मदात्यम चला जाता है

कफ मदात्यय चिकित्सा—

इसमें बल के अनुसार लंघन करवा करके, पीपल पीपला मूल, चव्य चित्तो की जड़ और सोंठ के चूर्ण के साथ मद्य का सेवन कराना हित कर है। सन्निपातिक मदात्यय में सब दोषों की चिकित्सा करनी चाहिए।

पानात्यय नाशक अचूक योग—

सच्य काला नमक, घी में भूनी हीङ्ग बीजोरे, निम्बू के फल की छाल, सोंठ, अजवायन इन औषधियों को समान भाग लेकर चूर्ण बनालें। इस चूर्ण की ४ रत्ती से ६ रत्ती की मात्रा में लेने से सब तरह के मदात्यय चले जाते हैं।

※ वात-नाड़ियां ※

हमारे शरीर में वात नाड़ी दो प्रकार की होती हैं, एक तो वह जो शरीर की शाखाओं से सम्बन्ध रखने वाली सेलों से आरम्भ होकर मस्तिष्क को जाती हैं, इनको वेदना वाहक नाड़ियां कहते हैं। दूसरी वे जो कि मस्तिष्क से आरम्भ होकर शरीर के प्रत्येक अंग, प्रत्यंग तथा सेलों को जाती हैं, इनको आज्ञा वाहक नाड़ियां कहते हैं। ये नाड़ियां लघु मस्तिष्क में से होती हुई दाहिने शारीरिक भाग की बृहन्मस्तिष्क के बांई तरफ तथा बाएं भाग की दाहिनी तरफ जाती हैं। यह ही कारण है कि मस्तिष्क के बांए भाग में चोट लगने से जब वात नाड़ियों का सम्बन्ध विच्छेद हो जाता है तब शरीर का दाहिना भाग निश्चेष्ट होजाता है। तथा दाहिने भाग में चोट लगने से बायां भाग निश्चेष्ट हो जाता है। इनही नाड़ियों के मेल से शुषुम्ना की रचना हुई है। इन्हीं नाड़ियों के द्वारा मस्तिष्क सम्पूर्ण शरीर को आज्ञा देता है-जिससे हाथ पैर तथा अन्य अङ्ग प्रत्यंगों को इधर उधर हिलना डुलना होता है।

इन्हीं नाड़ियों के द्वारा सम्पूर्ण शरीर की पीड़ाओं का मस्तिष्क को ज्ञान होता है। अतः मस्तिष्क तथा वात नाड़ियों का परस्पर सम्बन्ध है। जिससे शरीर का कार्य ठीक तरह चलता है। यदि आज्ञा वाटक नाड़ियों के टूटने से मस्तिष्क तथा शरीर का सम्बन्ध विच्छेद हो जावे तो मनुष्य पागल (उन्मत) हो जाता है तथा वेदना वाहक मस्तिष्क को जाने वाली नाड़ियों का सम्बन्ध विच्छेद हो जावे तो मनुष्य के लकवा (पक्षाघात) हो जाता है ।

यह नाड़ियां मस्तिष्क की आज्ञा सम्पूर्ण शरीर को देती हैं तथा मस्तिष्क को शरीर की वेदना की सूचना देती हैं यह ही इनका मुख्य कर्तव्य है।

अपस्मार (एपीलेप्सी) मृगी के कारण

चिन्ता, शोक आदि से दोष कुपित होकर, हृदय में स्थित हो कर स्मरण शक्ति को नष्ट कर देते हैं । उसे अपस्मार कहते हैं।

मृगी के सामान्य लक्षण—

इसमें आंखों के सामने अंधेरा आजाता है। वे होश हो कर जिस अवस्था में हो उसी अवस्था में गिर पड़ता है, दांत किट किटाता है, आंखें टेडी हो जाती हैं, तथा मुंह में झाग निकलते हैं हाथ पैर पटकता है यह सामान्य लक्षण हैं। वातादि भेद से चार प्रकार की मृगी है।

मृगी के पूर्व रूप—

दिल धड़कता है, हृदय शून्य होता है, ध्यान सा लगा रहता है, इन्द्रियां वे काम हो जाती हैं। तथा नींद नहीं आती।

वातिक मृगी के लक्षण—

रोगी कांपता है, दांत किटकिटाता है, मुंह से झाग निकलते हैं, हांपता है तथा उसको ऐसा प्रतीत होता है मानों लाल, नीला, रुक्ष शरीर वाला कोई प्राणी मेरी तरफ दौड़ता हुआ आता है।

पैतिक अपस्मार के लक्षण—

इसमें आंख झाग तथा मुंह पीले हो जाते हैं सब ही वस्तुवें पीली तथा लाल दिखाई देती हैं, प्यास लगती है और संसार उसको अग्नि से व्याप्त दिखाई देता है।

श्लेष्मिक मृगी के लक्षण—

फेन शरीर मुंह, आंखें सफेद हों, ठण्ढ मालूम हो, रूंगटे खड़े हो जावें, सफेद रूप दिखाई दे तथा चेता देर में हो उसे श्लेष्मा मृगी जानें।

सन्निपातिक मृगी के लक्षण—

तीनों दोषों के लक्षण जिसमें मिलते हों और क्षीण दुर्बल मनुष्य के कई दिनों से हों तो असाध्य जानें।

अपस्मार के असाध्य लक्षण—

जो मृगी वाला अधिक कांपता है, कमजोर होता है, भौं तथा आंखें चलायमान (फड़कती) हों तो असाध्य जानना चाहिए।

अपस्मार का समय—

जिस प्रकार भूमि में पड़ा हुआ बीज वर्षा ऋतु में पानी एवं समय पाकर उगता है उसी प्रकार समय पाकर दोष कुपित्त होकर पन्द्रह, बारह, दिन या एक महीने से मृगी का दौरा करते हैं।

मृगी में चिकित्सा क्रम—

वातज मृगी में (वस्ति) इनेमा लगाना चाहिए तथा पित्तज में विरेचन एवं कफज में वमन हितकर है जब रोगी सब तरह से शुद्ध हो जावे तब धीरज बंधा कर समन चिकित्सा करनी हितकर है।

अपस्मार में अंजन धूनी एवं नस्य देना अत्यन्त ही लाभ प्रद है, अतः ये अवश्य करने चाहिये।

मृगी में एरण्ड के तेल का विरेचन तथा मैन फल से वमन एवं साबुन के गर्म पानी एवं तैल का इनेमा देना चाहिये। कायफल के चूर्ण का नस्य, तथा सफेद मिर्च और मनशिला का अंजन हित कर होता है। अजवायन तथा लोबान की धूनी से मृगी ठीक हो जाती है।

अरीठे का पानी नाक में टपकाने से सब तरह की मृगी चली जाती है।

जो मनुष्य सुबह, दोपहर, और शाम को तीन २ माशे वचके चूर्ण को शहद के साथ चाटता है और ऊपर से खीर का भोजन करता है, इस प्रकार तीन महीने के प्रयोगसे अपस्मार अवश्य ही ठीक होजाता है यदि असाध्य न हो तो।

ब्राह्मी के रस ४ तोला में १ तोला शहद मिलाकर पीने से सब तरह की मृगी चली जाती है, ब्राह्मी घृत तथा मद्य कल्याण एवं महा चेतस घृत भी इसमें लाभ प्रद हैं। दूध, घी मक्खन, बादाम रोगन बादाम पाक या हलुवा, चावल, मूंग की दाल, आदि पदार्थ इसमें हितकर हैं। तीक्ष्ण गर्म एवं चरपरे पदार्थ छोड़ दें।

गो मूत्र में सफेद सरसों पीस कर उसका उबटन करावे तथा निम्नलिखित कल्याण चूर्ण खिलावे, इससे सब तरह का मृगी रोग चला जाता है।

पीपल, पीपला मूल, चव्य, चिते की जड़, सोंठ, काली मिर्च, वायविडङ्ग, हरड़, बहेड़ा, आंवला, जीरा, धनियां, करञ्ज बीज, सैन्धा नमक, बिड़ नमक, काला नमक, अजवायन इन सब को समान भाग लेकर कपड़ छान, चूर्ण करलें। इसको कल्याण चूर्ण कहते हैं। इसको ३ से ६ माशा तक की मात्रा गर्म पानी के साथ लेनी चाहिये अवश्य आराम होजाता है।

ब्राह्मी घृत—

ब्राह्मी पत्तों का रस १ सेर घृत १ पाव वच, कूठ तथा शंख पुष्पी इनका कल्क १ पाव इन सब को कलौं के वर्तन में डाल कर पकावो जब घी बाकी रहे तब उतार कर ठण्डा होने पर छान कर एक शीशी में डाल लो, इसको १ तोला से २॥ तोला तक की मात्रा दूध के साथ सेवन कराने से भयङ्कर से भयङ्कर मृगी तथा उन्माद चला जाता है यह घृत बुद्धि वर्धक एवं मानसिक शक्ति दाता है।

योषापस्मार—(हिस्टीरिया)

अपतन्त्रक वायु—के लक्षण—

वायु कुपित हो कर हृदय, कनपटी और शिरमें पीड़ा करता हुआ शरीर को धनुषकी तरह नमा देता है। बेहोशी पैदा करता है उस समय श्वास बड़े कष्ट से आता है। आंखें या तो बन्द रहती हैं या खुली रहती हैं और कण्ठों में कबूतर की तरह आवाज या शब्द होता है यह रोग भी मृगी से मिलता जुलता ही होता है मनुष्य की बजाय औरतों को यह रोग अधिकतर देखा गया है।

चिकित्सा क्रम—

इस रोगी को एकांत स्थान में रखना चाहिए, उसके आस पास शस्त्र या वर्तन आदि न होने चाहिए।

यदि कब्ज हो तो एरण्ड का तैल १ तोला एक पाव दूध में मिला कर पिलाओ। ब्राह्मी, घृत कल्याण चूर्ण, चेतस या महाचेतस घृत भी इस में लाभप्रद है। चन्दन तथा बादाम के रोगन की मालिश करानी चाहिए। ब्राह्म रसायन च्यवनप्राश तथा द्राक्षासव का उपयोग भी इसमें लाभप्रद देखा गया है। शु० कुचला २ रत्ती तथा शु० धतूरे के बीज २ रत्ती नागर पानी में डालकर खाने से योषापस्मार शान्त हो जाता है। तथा कई दिनों तक लगातार सेवन करने से यह रोग जड़ से चला जाता है।

इस रोग में रोगी को प्रसन्न रखो। औरतों को यदि रजो दर्शन होने के कारण यह रोग हुआ हो तो मूली के बीज १ माशा गाजर के बीज १ माशा चक्रकोल ३ माशा तथा गुड़ एक छटांक का काढ़ा बना कर दो।

रोगी को शारीरिक परिश्रम कराना इसमें हितकर है, यदि बड़े घराने की औरतों को यह रोग हो तो कम से कम चार या पांच सेर आटा चाकी से पिसवाना चाहिये, इस प्रकार यह शारीरिक परिश्रम करेगी तो यह रोग अवश्य ही चला जावेगा। दौरा को दूर करने के लिए सरसों के तैल में अलसी का तैल डाल कर मालिश करनी चाहिए।

मनः शिला हरताल पीला, तथा पीपल को महीन पीसकर नेत्रों में अञ्जन आञ्जना चाहिये। नोसादर तथा चूने को बराबर बराबर पीस कर इसका नस्य देना चाहिये। या अरीठे का पानी

बनाकर उसी की दो चार बून्दे नाक में टपकानी चाहिये । इस प्रकार उपचार करने से हिस्टीरिया का दोरा शान्त होजाता है। बाद में पोष्टिक घृत पाक या अवलेह आदि का उपयोग करना चाहिये। कस्तूरी आधी रत्ती अम्बर आधी रत्ती केशर आधी रत्ती मुक्तापिष्टी आधी रत्ती इनकी तीन मात्रा मक्खन के साथ लेने से योषापस्यार चला जाता है। यदि यह मात्रा छः महीने तक उष्ण काल को छोड़ कर लीजावे तो योषापस्यार समूल नष्ट हो जाता है।

पक्षाघात के कारण और लक्षण-

अपने कारणों से कुपित हुआ वायु शरीर के एक तरफ की शिरा तथा स्नायू, एवं वात नाड़ियों को सुखाकर एक अङ्ग या दाहिने तथा बायें हिस्से को अकर्मण्य कर देता है । जिस हिस्से में यह होता है उस हिस्से के जोड़ ढीले हो जाते हैं, शरीर बेकाम हो जाता है, ठण्डे गर्म आदि का स्पर्श ज्ञान नहीं होता तथा पीड़ा भी नहीं होती है, इसको कोई एकाङ्ग तथा कोई पक्षवध एवं कोई लकवा कहते हैं।

आधुनिक मतवाले रक्त का दोरा न होने से वेदना वाहक तथा आज्ञावाहक तारों का जिस शरीर के भाग से सम्बन्ध टूट जाता है, उसी भाग में लकवा होजाता है । ऐसा मानते हैं। परन्तु इनका मत भी प्राचीन आचार्यों से मिलता जुलता ही है। यदि यह शरीर के दोनों भागों में होजाता है तो दोनों भाग ही

अकर्मण्य हो जाते हैं, यह अवस्था बड़ी भयानक है। इस रोग को, वात, पित्त, कफ तथा क्षय के भेद से चार प्रकार का मानते हैं जैसे पित्त युक्त वायु से जो लकवा होता है उसमें चित्त संताप जलन मूर्च्छा आदि लक्षण होते हैं। यदि कफ युक्त वायु से होता है तो शरीर ठण्डा तथा भारी एवं सूजन आदि लक्षण होते हैं। एवं केवल वायु से होता है तो कष्ट साध्य होता है। तथा धातुक्षय से होता है तो असाध्य होता है।

असाध्य लक्षण—

गर्भिणी प्रसूता बालक बूढ़ा एवं जिसका रक्त क्षीण होगया हो क्षीण इनको पक्षाघात हो और पीड़ा न हो तो असाध्य समझना चाहिये।

आर्दित (चेहरे का लकवा) फेसियल परालिसिस के लक्षण—

कठिन चीजों के खाने से, जोर से बोलने या हंसने से, उबासी से वायु कुपित होकर चेहरे के आधे भाग या सारे भाग कोविकृत कर देता है जिससे मुंह टेढ़ा हो जाता है आंखें विकृत होजाती हैं चेहरा भद्दा लगता है बोली साफ नहीं होती, जिस भाग में यह रोग होजाता है उसी भाग की नाड़ टेढ़ी होजाती है त्वचा सो जाती है तथा भौंह ठोढ़ी तथा दान्तों के पास में पीड़ा होती है इसे अर्दित या चेहरे का लकवा कहते हैं।

अर्दित के असाध्य लक्षण—

जो रोगी कमजोर हो, जिसकी पलकें नहीं पड़ती हों जिसकी आवाज साफ नहीं हो और जो तीन वर्ष का पुराना हो गया हो अथवा मुंह नाक तथा आंख से पानी एवं कफ गिरता हो, जो कांपता हो वह असाध्य होता है।

पक्षाघात चिकित्सा—

इसमें महानारायण तैल तथा विष गर्भ तैल की मालिश करके अरण्ड तथा धतूरा एवं आक के गर्म करके पत्ते बांधने चाहिये। आक की जड़ के चारों ओर की मिट्टी को गर्म करके उसका सेक देना चाहिए।

इस रोग में कबूतर का मांस या उसका मांस रस खिलाना अत्यन्त ही हितकर है। प्रायः कबूतर के मांस से ही यह रोग चला जाता है।

इस में पारे तथा गन्धक की कज्जली तथा हरताल भस्म दो २ रत्ती दशमूलार्क या क्वाथ के साथ सेवन करने से पक्षाघात चला जाता है।

कुचेले के पत्ते, हींग और सांभर का सींग सोंठ इनका समान भाग लेकर पानी में पीस कर लेप करने से लकवा चला जाता है।

धतूरे के बीज और पत्तों का अर्क, बकायन के पत्तों का अर्क, आक के पत्तों का अर्क, नीम, असगन्ध, सहिंजना, एरण्ड

मकोय, थूहर इन सब के पत्तों का अर्क समान भाग एक २ पाव तथा मिठा तैलीया १ पाव लेकर सोंठ, मिर्च, पीपल, असगन्ध रास्ना, कूठ, नागर मोथा, देवदारू वच इन्द्रजौ भारङ्गी कायफल, पोहकरमूल, तज, तेजपात, इलायची, लौंग नागकेशर प्रत्येक आठ २ माशे लेकर तिल तैल दो सेर तथा २ सेर ही पानी डाल कर एक कढ़ाई में सब चीजें डाल कर पकावें, जब तैल बाकी रहे तब छान कर एक शीशी में भरलें इसे विष गर्भ तैल कहते हैं मालिश लकवे में अत्युत्तम है।

इसमें मल्ल चन्द्रोदय शु० शंखिया तथा वात चिन्तामणी रस का उपयोग भी लाभप्रद है। भांग तथा काली मिर्चका चूर्ण समान भाग लेकर बनालें इसे ६ माशा तक गर्म पानी के साथ इस चूर्ण का सेवन करने से पक्षाघात चला जाता है।

अर्दित चिकित्स–

इसमें बला तैल की मालिश तथा दशमूल का काढा पीने से आर्दित (चहरे का लकवा) चला जाता है।

कबूतर का मांस रस पीने से लकवा चला जाता है एक पोथिया लहसुन १ तोला को शिल पर पीस कर २ तोला तिल तैल में मिला कर खाने से लकवा आर्दित तथा सब तरह की वात व्याधियां नष्ट हो जाती हैं। उड़द की दाल की पिट्टि मक्खन के साथ खाने से लकवा चला जाता है। मल्ल चन्द्रोदय का

सेवन भी इसमें हितकर है शुद्ध शंखिया १ चावल से लेकर एक रत्ती की मात्रा तक सेवन करना तथा एकाङ्गवीर रस और मल्ल चन्द्रोदय का सेवन भी लाभ करता है। पक्षाघात तथा आर्दित में खट्टे एवं शीत पदार्थ एवं ठण्ड तथा वात वर्धक पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिये। महानारायण या विष गर्भ तैल की मालिश करें या मीठा तैल या कुचिला शतावर असगन्ध, इनका समान भाग कल्क १ छटांक तथा १ सेर धतूरा पञ्चाङ्ग का स्वरस तथा एक पाव तिल का तैल एक लोह की कढाई में डालकर पकावें जब तैल २ बाकी बचे तब छानकर शीशी में रखले। इस तैल की मालिश करने से सर्वाङ्ग वात पक्षाघात अर्दित आदि रोग नष्ट होजाते हैं। इस मालिश के साथ २ एक रति से लेके डेढ रति की मात्रा तक मल्ल चन्द्रोदय शहद और पान के रस के साथ सेवन करावें तथा भोजन में दूध, घी, हलवा, जलेबी, घेवर, पूए, खीर आदि पौष्टिक वात नाशक पदार्थ खिलाना चाहिए। आक के नीचे की रेती को कांजी में सेककर उसका सेक देना चाहिए। इस प्रकार का उपचार करने से पक्षाघात तथा आर्दित में प्रायः लाभ होजाता है। कब्ज को मिटाने के लिए दूध के साथ बला तैल या एरण्ड के तैल को पीलाना चाहिए।



* सप्तम—अध्याय *

नपुंसकता के कारण—

अप्राकृतिक नपुंसकता—किसी प्रकार की अंडकोषों पर चोट लगने से, अधिक मैथुन से, हस्त मैथुन तथा अप्राकृतिक मैथुन एवं मानसिक आघातों के कारण चिन्ता शोक आदि के होने से, अच्छे भोजन न मिलने से साईकिल तथा घोड़े की अधिक सवारी करने से, एवं मानसिक कुविचारों से होती है।

प्राकृतिक नपुंसकों के भेद—

प्राकृतिक नपुंसक पांच प्रकार के होते हैं। आसेक्य, सुगन्धी, कुम्भिक, ईर्ष्यक, और षण्ढ के भेद से। इनमें आदि के चार प्रकार के नपुंसक वीर्ययुक्त होते हैं, और मैथुन कर सकते हैं, किन्तु उनके वीर्य में शुक्रकीटों के अभाव से स्त्री को गर्भ स्थिति नहीं होती है। पांचवां षण्ढ नपुंसक वीर्य हीन होता है और वह मैथुन नहीं कर सकता।

आसेक्य नपुंसक के लक्षण—

पिता के वीर्य, और माता की रज की कमी से आसेक्य नाम का नपुंसक पैदा होता है, वह दूसरे मनुष्य का वीर्य चाट

कर फिर मैथुन करने की शक्ति को प्राप्त करता है, इसका दूसरा नाम मुख योनि भी है।

सुगन्धि नपुंसक के लक्षण—

सुजाक या गर्मी (उपदंश) के कारणसे जो खराब योनि हो जाती है। उस से जो बच्चा पैदा होता है वह सौगन्धिक या सुगन्धि नपुंसक होता है। वह योनि तथा अण्डकोषों को सूंघ कर ही मैथुन सक्ति को प्राप्त कर सकता है अन्यथा नहीं, बकरे तथा बैल भी सौगन्धिक नपुंसक होते हैं।

कुम्भिक नपुंसक के लक्षण—

अपनी गुदा में मैथुन करा कर फिर मैथुन करने की शक्ति को प्राप्त करता है उसे कुम्भिक या गुद योनि नपुंसक कहते हैं।

ईर्ष्यक नपुंसक के लक्षण—

जो दूसरों के मैथुन को देख कर फिर मैथुन करने की शक्ति को प्राप्त करता है। उसे ईर्ष्यक या ईष्ट योनि नपुंसक कहते हैं।

षण्ड नपुंसक के लक्षण—

यह लिङ्ग आदि चिन्ह होते हुए भी शिथिलता के कारण मैथुन शक्ति से रहित होता है।

नपुंसकता के सामान्य लक्षण—

बीज (शुक्रकीट) के क्षीण होने से ध्वज भङ्ग गुप्त स्थान पर चोट आदि के लगने से, वीर्य क्षीण होने से, तथा बुढापा

से जो क्लीवता होती है उसके निम्न प्रकार के लक्षण होते हैं। मनोवांछित स्त्री के पास जाने पर भी इन्द्री शिथिलता से भोग न कर सके और कभी २ इन्द्रियोत्थान से जावे भी तो श्वास का दौरा हो पसीना आजावे तथा बीच में इन्द्रिय शिथिल हो जावे जिससे भोग कर नहीं सकता।

क्लीवता का चिकित्सा क्रम—

मनुष्य को ३ दिन तक घी पिलावे, उसके बाद शरीर पर तैल मालिश करके पसीना दिलावे तथा इनेमा लगावे, या अरण्ड तैल आदि का विरेचन देवे इसके बाद वाजीकरण तथा रसायन आदि का प्रयोग कराना चाहिये। तथा तिलों का भी प्रयोग करें। इस प्रकार का उपचार करने से नपुंसकता श्रेष्ठतया चली जाती है पुंस्त्व शक्ति के लिये वाजीकरण प्रयोग उपयुक्त होते हैं अतः वाजीकरण के प्रयोग पहिले लिखे जा रहे हैं।

वाजीकरण के लक्षण—

जिन पदार्थों से मैथुन करने में घोड़े की सी शक्ति पैदा हो जावे उन पदार्थों को वाजीकरण कहते हैं।

वाजीकरण के फल—

वाजीकरण पदार्थ वीर्य को बढ़ाते हैं तथा पुत्र रत्न को उत्पन्न करने में सहायक होते हैं। बिना पुत्र के इस संसार में मनुष्य का जीवन सूखे पेड़ सूखी नदी आदि की तरह निष्फल होता है। जिस पुरुष के अधिक सन्तान हैं वह ही सुखी तथा

मान्य है। अतः अधिक संतानों की प्राप्ती वाजीकरण से ही होती है।

वाजीकरण योग—

कौंच के बीज एक सेर लेकर चार सेर दूध में पकावे जब वे स्विन्न हो जावें तब उनके छिलके उतार कर महीन पीसलें फिर आध सेर घी में सेक कर ६—६ माशा की गोलियां बना कर खाण्ड की चासनी या शहद में डालदें। इन गोलियों को सुबह शाम एक २ दूध के साथ लेने से नपुंसकता चली जाती है। तथा स्त्री संभोग में अपूर्व आनन्द आता है। यह योग सर्व साधारण के लिए अमृत के समान है।

उड़द की दाल तथा साठी चावलों को पका कर घी डाल कर खाने से तथा उपर दूध पीने से मनुष्य पुंस्त्व शक्ति को प्राप्त हो जाता है।

सफेद मूषली स्याह मूषली ताल मखाना बीज बन्द शतावर गोखरू बहमन सफेद बहमन सुर्ख शालम मिश्री पञ्जा मिश्री असगन्ध इनका समान भाग लेकर चूर्ण करलें तथा सब के बराबर खाण्ड डाल कर सुबह शाम तीन २ माशे धारोष्ण दूध के साथ लेने से वीर्य तथा पुंस्त्व शक्ति बढ़ती है। १ सेर घी को चार सेर शतावर का रस तथा १६ सेर दूध में पकावें जब गाढ़ा होजावे तब खाण्ड डालकर लडडू बनालें। एक २ छटांक लडडू दूध के साथ खाने से मनुष्य वृष्य होजाता है।

शुद्ध शिलाजीत के सेवन करने से भी मनुष्य पुंस्त्व शक्ति को प्राप्त होता है। केशर कस्तूरी अम्बर तथा स्वर्ण भस्म भी परम शक्तिदायक वृष्य है। मन को प्रसन्न करने वाली तमाम वस्तुएं भी वृष्य हैं । ३ माशा भांग का चूर्ण दूध के साथ लेने से परम वृष्य है घी, दूध, मक्खन, मलाई मालपूए, घेवर, जलेबी आदि व्यञ्जन भी वृष्यत्तम हैं,

वाजीकरण प्रयोग—

सफेद चिरमी तथा शतावर का समान भाग लेकर चूर्ण बनालो, इस चूर्ण की १ माशा मात्रा सुबह शाम धारोष्ण दूधके साथ सेवन करने से मनुष्य मैथुन करनेमें घोड़े के समान शक्ति प्राप्त कर सकता है।

नागबलादि योग—

खरेंटी बीज, गोखरू कौंचबीज, ताल मखाना शतावर अतिबला, (कंघी) इनका समान भाग लेकर चूर्ण बनालें। इस चूर्ण को ४ माशा की मात्रा में रात को सोते समय दूध के साथ लेने से एक से अधिक भी मनुष्य स्त्रियां रख सकता है इतनी पुंस्त्व शक्ति आजाती है।

वीर्य स्तम्भक योग—

बकरी तथा ऊंटनी के दूध में गाय का घी मिला कर पैर के तलुवों पर १ घण्टा तक मालिश करके भोग करने से वीर्य स्खलित नहीं होता है।

तिल्ला—

सूवर की चर्वी तथा शहद की इन्द्रिय पर मालिश करने से काम शक्ति बढ़ती है।

अन्य तिल्ला—

ऊंट कटेरी की जड़ को बकरी के मूत्र में १ महिने तक भिगोदें फिर उसको निकाल कर इन्द्री पर लेप करने से रति काल में तथा उसके बाद भी दृढ़ता बनी रहती है।

अन्य तिल्ला—

केंचवों को पीस कर शेर की चर्वी में मिला कर इन्द्री या पैर के तलुवों में मालिश करने से नपुंसकता नष्ट हो जाती है तथा बुढा भी जवान होजाता है।

* रसायन के लक्षण *

जो औषध बुढापा तथा रोगों को दूर करती है उसे रसायन कहते हैं।

रसायन के फल—

जो शारीरिक उन्नति तथा मानसिक सुन्दर भाव हैं वे रसायन से ही होते हैं। तथा दीर्घायु स्मृति, मेधा बुद्धिजवानी कांति, शारीरिक तथा मानसिक, बल बचन सिद्धि आदि रसायन के ही फल हैं।

रसायन के भेद—

रसायन वातातपिक तथा कुटी प्रावेशिक के भेद से दो प्रकार का है।

वातातपिक—

जो रसायन चलते फिरते हवा धूप आदि में सेवन किया जाता है उसे वातातपिक कहते हैं।

कुटी प्रावेशिक विधि—

जिस नगर में साधु, ज्ञाता, एवं धर्मात्मा पुरुष बसते हों उस नगर के पूर्व, या उत्तर की तरफ एक कुटी बनायें, जिसमें तीन खण्ड हों तथा मजबूत और सुन्दर हो, यदि उष्ण काल हो तो उसमें रोशनदान आदि हों और शीतकाल हो तो चारों ओर से बन्द हो तथा वहां पर किसी प्रकार का कोलाहल एवं स्त्री जाति का जाना आना एवं शब्द आदि न हो एवं खान पान औषध वैद्य आदि का सब तरह का प्रबन्ध हो ऐसी कुटी में शुक्ल पक्ष शुभ मुहूर्त एवं नक्षत्र में रसायन सेवन अभिलाषी पुरुष क्षौर कर्म कराकर तथा वमन विरेचन के द्वारा शुद्ध होकर मानसिक विकारों को नष्ट कर सम्पूर्ण प्राणियों पर दया भाव रखता हुआ प्रवेश कर के रसायन का सेवन करे। कुटी प्रावेशिक रसायन का सेवन जो धनिक हैं तथा जिनके पास समय है तथा परहेज के पक्के हैं वे ही कर सकते हैं। बाकी सर्व साधारण के लिए वातातपिक ही रसायन का उपयोग करना चाहिए।

रसायन प्रयोग काल—

यौवन अवस्था के आदि में या अन्त में रसायन का प्रयोग करना चाहिए। जिस प्रकार मैले कपड़े पर रङ्ग नहीं चढ़ता है उसी प्रकार विना वमन विरेचन से शरीर शुद्ध किए विना रसायन भी फल प्रद नहीं होता है। अतः शरीर को शुद्ध करके ही रसायन का प्रयोग करना चाहिए।

हरड़ का रसायन—

पुराना गुड़, शहद, सोंठ, पीपल, या सैन्धव नमक के साथ दो २ हरड़ प्रतिदिन किसी एक गुड़ आदि वस्तु के साथ खाने से रोगों से रहित होकर १०० वर्ष तक मनुष्य जीवित रहता है।

अश्वगन्धा रसायन—

एक माशा से ३ माशा तक अश्वगन्ध के चूर्ण को गर्म दूध या जलके साथ सेवन करने से रोगों से रहित होकर १०० वर्ष तक मनुष्य जीता है।

धात्री रसायन—

एक सेर आंवलों के चूर्ण को एक सेर आंवलों के रस में भावित करके एक पाव शहद तथा आध सेर घी डाल कर एक महीने तक एक भाण्ड में डालकर राख के ढेर में गाड़दें, फिर निकाल कर एक २ तोला प्रतिदिन खाने से मनुष्य रोग रहित होकर १०० वर्ष तक जीवित रहता है।

च्यवन प्राशावलेह, ब्राह्म रसायन, लोह रसायन, शिलाजतु, लोह भस्म–

आदि का प्रयोग भी अवस्था को बढ़ाते हैं । और शरीर को हृष्ट पुष्ट बनाते हैं ।

बुद्धि वर्धक रसायन—

गिलोय, अपामार्ग, वायविडङ्ग, वच, हरड़, कूठ, शंख पुष्पी, तथा शतावर इन औषधियों का समान भाग लेकर चूर्ण बनालें इस चूर्ण की ३ माशा मात्रा दूध के साथ तीन दिन तक लेने से एक हजार श्लोक, दोहे मनुष्य एक दिन में याद कर सकता है ।

केवल शंख पुष्पी का स्वरस या ब्राह्मी का स्वरस पीने से ही मनुष्य की बुद्धि बढ़ जाती है ।

आचार रसायन—

सात्विक भोजन, सदाचार, ब्रह्मचर्य, तप ईश्वरोपासना, सत्य वचन, सब प्राणियों पर दया पवित्रता, बड़ों की सेवा आदि कारणों से चित्त को शान्ति एवं आनन्द मिलने से शरीर की पुष्टि होती है, धातुयें बढ़ती हैं तथा बिना रसायन वस्तुवों के सेवन से ही रसायन का फल मिल जाता है ।

विदारी कन्द रसायन—

विदारी कन्द के चूर्ण को विदारी कन्द के रस में भावित करके खाने से रसायन है ।

* वैद्य विशारद परीक्षा *

सम्वत् १९९८

उर्ध्वाङ्ग चिकित्सा पूर्णाङ्क १००

(१) पीनस रोग के लक्षण तथा चिकित्सा लिखिए । १०

(२) मोतिया बिन्दु रोग को आयुर्वेद शास्त्र में किस नाम से कहा गया है और उसके लक्षण तथा चिकित्सा क्या है । १०

(३) कर्ण बाधिर्य और कर्णनाद क्यों होता है इनकी चिकित्सा और पथ्यापथ्य बताइये । १०

(४) वाजीकरण की परिभाषा उसके उपयोग और विधि लिख कर एक वाजीकरण प्रयोग लिखिए । १०

(५) (क) उन्मादरोग का विप्रकृष्ट निदान क्या है ।
(ख) विषजन्य उन्माद के लक्षण तथा उसकी चिकित्सा लिखीए । १७

(६) (क) पक्षाघात के लक्षण और उसकी चिकित्सा लिखिए ।
(ख) किस प्रकार का पक्षाघात असाध्य होता है १७

(७) मूर्च्छा तथा सन्यास रोग में क्या भेद है । १२

(८) रसायन की विधि और उसके उपकार बतला कर भाव प्रकाश के मत से एक सिद्ध रसायन लिखिए । १४

सम्वत् १९९९

पूर्णाङ्क १००

(१) किस प्रकार के आहार विहार सेवन करने से दृष्टि शक्ति न्यून होती है, तथा अधिक होती है। इसका विषद विवेचन करते हुए दृष्टि बढ़ाने वाले प्रसिद्ध शास्त्रीय प्रयोग लिखिए। १२

(२) पीनस रोग का निदान तथा कर्ण वाधिर्य रोग की चिकित्सा लिखिए। १२

(३) उन्माद रोग का पथ्यापथ्य सन्यास रोग की चिकित्सा तथा अपस्मार के भेद लिखिए। १२

(४) मनो दुःस्वप्न रोग का निदान तथा लक्षण और नाड़ीवात संस्थान के विकारों पर उपाय लिखिए। १०

(५) ब्रह्मचर्य के सेवन से रसायन तथा वाजीकरण सम्बन्धी क्या २ लाभ होते हैं ? इसका पृथक २ स्पष्ट तथा पूर्ण विवेचन कीजिए। १६

(६) सर्वदा और सर्वथा पथ्य वस्तुवों का नाम निर्देश क रसायन की परिभाषा और उपयोगिता लिखिए। १२

(७) लंघन करना किस अवस्था में किन रोगियों के लिए अपथ्य हैं। शास्त्र तथा युक्ति द्वारा लिखिए और बृंहणों के उपाय बतलाइये। १२

(८) असाध्य पक्षाघात के लक्षण आंख की फूली पर एक वत्ती मुख पाक पर एक तैल और दांत के दर्द पर एक मञ्जन लिखिए। १४

सम्वत् २०००

पूर्णाङ्क १००

सूचना—किन्हीं पांच प्रश्नों का उत्तर लिखिए। छटा प्रश्न अनिवार्य है। सभी प्रश्नों के लिए समान अङ्क नियत हैं।

(१) रसायन और वाजीकरणमें क्या भेद है बालकों को इसकी आवश्यकता के विषय में आप क्या विचार करते हैं? ब्रह्मचर्य से क्या २ लाभ हैं? बिना औषधि रसायन और वाजीकरण की किस प्रकार पूर्ति हो सकती है?

(२) पीनस पूतिनस्य और प्रतिश्याय के भेद लिखते हुए तत् सम्बन्धी लक्षण और चिकित्सा पर प्रकाश डालिये।

(३) आयुर्वेद में मोतियाबिन्द सम्बलबाई और आंख आनेको क्या कहते हैं? उनके लक्षण और चिकित्सा का उल्लेख कीजिए। आयुर्वेद के अनुसार नेत्र चिकित्सा के ६ प्रकार के उपचारों का पूर्ण विवरण लिखिए।

(४) नाड़ी और मस्तिष्क में क्या सम्बन्ध है? उन्माद और पक्षाघात में विकार कहां उत्पन्न होता है दोनों के निदान लक्षण तथा चिकित्सा लिखिए।

(५) एक बेहोश व्यक्ति को देख कर आप यह कैसे निर्णय करेंगे कि उसकी बेहोशी मानसिक उद्रेक, चोट, रोग,

शराब, विषपान अथवा विपाक आहार के कारण है। सविस्तार वर्णन करके उसके होश में लाने की तत्कालिक चिकित्सा लिखिए।

(६) मुखामपिड़िका, कृमिदन्त, दन्तहर्ष, कण्ठशालूक अभिष्यन्द सूर्यावर्त, अर्धावभेदक के विषय में संक्षेप से लिखिए।

(अ) आयुर्वेद के आठों अङ्गों का वर्णन करो।

(ब) रोग परीक्षा करते समय जिह्वा और नेत्रों की परीक्षा क्यों की जाती है सविस्तार लिखिए।



सम्वत् २००१

पूर्णाङ्क १००

(१) उन्माद और अपस्मार का निदान तथा लक्षण लिखिए, और इन दोनों रोगों के पारस्परिक अन्तर का स्पष्ट विवेचन कीजिए। १६

(२) क्लैव्य के कितने भेद हैं ? अप्राकृतिक मैथुन जन्य क्लीवता का समावेश किस भेद में हो सकता है ? इस प्रकार के क्लीवत्व की चिकित्सा लिखिए।

अथवा

नेत्राभिष्यन्द, अञ्जननामिका, शिरोत्पात, और लिङ्गनाश

(अगले पृष्ठ पर)

से आप क्या अभिप्राय समझते हैं । किस प्रकार का आहार विहार नेत्र रोगों को उत्पन्न करता है ।

(३) वाजीकर औषधों का सेवन किस हेतु से किया जाता है । वीर्य के शीघ्र स्खलन से पीड़ित रोगी के लिये कौन कौन से वाजीकर पदार्थ हितकर हो सकते हैं ?

अथवा

अर्धावभेदक, सूर्यावर्त, मुखदूषिका और नीलिका की लक्षण सहित चिकित्सा लिखिये । १३

(४) वर्तमान समय में सुप्रचलित पाइरिया नामक दन्त रोगकी शास्त्रोक्त संज्ञा लिखिये । दन्त शुद्धी के लिये ब्रुश और दातुन में से आप किसे अधिक उत्तम समझते हैं और क्यों ? सामान्य दन्त रोग नाशक कोई मंजन लिखिये १४

(५) रसायन का लक्षण और फल लिखकर वयः स्थापक और मध्य रसायन का नाम लिखिये । १२

(६) पीनस की चिकित्सा और दुष्ट प्रतिश्याय के लक्षण लिखिये और बतलाइये, पुराने प्रतिश्याय के कारण किन रोगों के उत्पन्न होने की सम्भावना होती है ? १५

(७) कर्णस्राव की चिकित्सा लिखिये । बाधिर्य में किस किस दोष की प्रधानता मानी जाती है ? कर्णशूल की चिकित्सा और उसके उपद्रव लिखिये ।

सम्वत् २००२

पूर्णाङ्क १००

(१) वातिक मदात्य का लक्षण और पक्षाघात का निदान एवं चिकित्सा लिखिये। १६

(२) यज्जरा व्याधि विध्वंसि वयः स्तम्भ करं तथा
चक्षुष्यंबृंहणं वृष्यं भेषजं तद्रसायनम् ॥

इस लक्षण को ध्यान में रखते हुए वनस्पतियों, रत्नों और धातुओं में से ऐसे किन्हीं तीन तीन द्रव्यों के नाम लिखिये जिन्हें आयुर्वेद में रसायन माना गया है। २०

अथवा

कुटि प्रावेशिक और वातातपिक विधि का वर्णन कीजिये रसायन सेवन करने वाले व्यक्ति के लिए रसायन सेवन से पूर्व शरीर शुद्धि क्यों आवश्यक है ? यह शरीर शुद्धि क्या है और क्यों की जाती है ?

(३) कर्णस्राव, कर्णनाद, नासापरिशोष और नासापाक का लक्षण और चिकित्सा लिखिए। २०

(४) शिराजाल और पोथकी का लक्षण और चिकित्सा लिख कर आश्चोतन विधि का स्पष्टीकरण कीजिये। १६

(अगले पृष्ट पर देखें)

(५) मुख पाक, दन्त हर्ष अलास और अनन्त वात का निदान लक्षण और चिकित्सा लिखिये। १८

(६) वाजीकरण का क्या अर्थ है? एक वाजीकरण प्रयोग लिखिये। १०



सम्वत् २००३

पूर्णाङ्क १००

(१) सूर्यावर्त अनन्त वात और शङ्खक में से किन्ही दो रोगों का निदान तथा चिकित्सा संक्षेप में लिखकर "शिरोवास्ते" का अभिप्राय स्पष्ट कीजिये। १२

(२) दृष्टि किसे कहते हैं? इसमें होने वाले एक प्रधान रोग का वर्णन कीजिये। दृष्टिगत रोगों में पथ्यापथ्य का विचार क्या करना चाहिये, विस्तार सहित लिखिये। १६

अथवा

सव्रण शुक्र और अव्रण शुक्र में भेद बतला कर अजका जात के विषय में जो कुछ भी जानते हो लिखिये। बिडालक एवं आश्चोतन से क्या समझते हैं?

(३) कर्णशूल का आशुलाभप्रद उपचार लिखकर पीनसके उपर एक सर्वाङ्गपूर्ण निबन्ध लिखिये । १८

(४) दन्त वेष्ट की पहचान क्या है ? इसकी मुख्य चिकित्सा का उल्लेख कीजिये । मुख रोगों की सामान्य चिकित्सा कैसे की जाती है ? १५

(५) पोयकी क्या है ? पिण्डी किसे कहते हैं और इस का प्रयोग कब किया जाता है ? ६

(६) मूर्च्छा, अपस्मार और उन्माद में क्या अन्तर है ? पानात्यय कैसे होता है और उसकी चिकित्सा क्या है ? १५

अथवा

पक्षाघात के निदान, लक्षण, साध्या साध्यता एवं चिकित्सा का विशद वर्णन कीजिये ।

(७) उन्माद के सामान्य लक्षण लिखकर इसके अरिष्टलिङ्गों का उल्लेख कीजिए । इसे अपस्मार से प्रथक कैसे किया जाता है ? १५





शुद्धाऽशुद्ध विवरण-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	शुद्ध	अशुद्ध
१	१	मञ्जरी	मञ्जरी
१	७	खरदरे	खरखरे
२	१०	होठ	ओंठ
२	११	होठ	ओंठ
२	११	होठों	ओंठों
२	१६	होठ	ओंठ
३	६	मसूड़े	नसूढ़े
३	१३	गम	गय
३	१७	होठ	ओंठ
४	२०	पीप	पीक
६	१५	सेमर	सेमा
७	१	रेन्युसा	रेन्युता
८	६	युक्त	रहित
१२	१५	ये	में
१३	६	तिक्त	निक्त
१३	१५	धूम्रपान	धूमपान
१७	६	अकर करा	अकर करा
१७	१६	चूर्ण	चूर्नें
१७	१६	भुनेसुहागे	सुहागे
१९	२	रोगाहोते हैं	रोग हैं
२१	४	नासास्राव	प्रति स्राव
२२	१४	मूल	थूल
२३	६	नाक	नाथ

२३	१४	धूंवें	धूम
२५	१०	गन्थ	गन्ध
२७	२	इतना ही तैल (छूट गया है)	
२८	४	प्रति श्याय	प्रतिश्याप
२९	५	मिलावट	मिलावठ
२९	१३	श्रवण नाड़ी	श्रवन नाड़ी
२९	१६	कर्ण स्वेड	कर्ण स्वेद
३०	२	स्वेड	श्वेद
३१	१८	अर्श	अर्थ
३५	१६	को	के
६५	१६	का	को
४५	४	विदग्ध	विग्ध
४८	१२	पाकात्यंय	पाकात्य
५०	१५	फेफ	कफ
५१	१२	वर्त्म कर्दम	कर्टम
५३	१६	कर्दम	कर्दव
५४	१६	शिरामें	शिराये
५५	१३	पद्म	पद्म
५६	१	पद्म	पद्म
५७	२	से सघन स्राव	शघव
५७	१८	होने	जाने
५८	११	वाताभिष्यन्द	वाताभिष्यन्द
५८	२१	शिराए	शिनव
६०	७	हताधिमन्थ	हतोधिमन्थ
६७	१५	भांगरा	अंगरा

६६	८	नवजात	नवज्ञत
६६	१२	धूमर	धूमर
६६	१८	वांया	वांय
६६	१६	हाङ्गिना	हत्यां
७०	३	पश्चात	पश्चात
७०	८	ग्राण	घ्राय
७०	१४	होता	होती
७०	१८	तथा	तथा
७०	१६	उत्तम	मध्यम
७१	६	अर्धावभेदक	अर्धावभेदक
७१	१२	हों	छुट नाश है
७२	१२	रक्त	रक्त
७३	८	कपाल	कपल
७३	८	कम्पन	पीड़ा
७३	२१	अत्रकपारी	अपथकय कारी
७४	२	रक्त	रक्त
७५	२	स्निग्ध	स्निग्ध
७८	२	शुध्द गन्धक	शुद्ध गंधक
७८	१०	अपस्मार	अपस्मार
७८	११	माहात्म्य	महात्म्य
७६	१३	वाहक	वाहक
७६	१४	उन्ही से	की में
८०	१०	खट्टे	फट्टे
८१	१३	इन्द्रियों	इन्द्रियों
८२	:	तन्द्रा	तन्द्रा
८३	१२	अपशल्य	अपशल्य

८५	३	लगते	लगाते
८५	६	मैन	यैन
८५	९	विशेष	विषय
८६	७	कनिस्य	वाकस्य
८६	१८	से	बे
९२	२	दुरालना	दुरालमा
९३	९	अवध्य	अबाध्य
९३	११	रूक्ष	रक्ष
९३	११	व्यवायी	व्यबापी
९५	२१	विकार	विवम
९६	१·४·८·११	मदात्यय	मद्रात्यम
९७	४	किर्शी	निसी
१०३	८	महा	मद्य
१०४	९	योषापस्मार	योपपस्यार
१०५	७	पान	पानी
१०५	७	योषापस्मार	योषापस्थार
१०७	१३	लक्षण	लक्षथा
१०९	१३	चिद्दित्सा	चिकित्स
११२	१४	दूप	इष्ट
११८	१६	धात्री	धावी
११९	६	अपामार्ग	अयामार्ग